शाविरा प्रकाशन – 21

नई शिक्षा नीति – 1986

दस्तावेज़

(शिविरा पत्रिका, जुलाई, 1986 का अनुमुद्रण)

Sub. National Systems Unit,
National Institute of Educational
Planning and Administration
17-B, Sri Aurobindo Marg New Delhi-110016
DOC. No. 3420
Date. 24.1.1.86

निदेशालय

प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान

बीकानेर

NIEPA DC
D03420

दस्तावेज़

नयी शिक्षा नीति-1986

नयी शिक्षा नीति का दस्तावेज़ अंततः मई, '86 के दूसरे सप्ताह में लोक सभा और राज्य सभा द्वारा पारित हो गया।

केन्द्र सरकार ने सत्ता में आने से पूर्व जनता के सामने जो एक संकल्प किया था कि वह राष्ट्रीय स्तर पर एक संगत शिक्षा प्रणाली लागू करेगी, जो देश को इक्कीसवीं सदी के दरवाज़े तक ले जाएगी, उसे पूरा करने की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम कहा जाएगा।

अपने पाठकों की जानकारी और अध्ययन-चिंतन के लिए हम नयी शिक्षा नीति को यहाँ अविकल प्रकाशित कर रहे हैं। दस्तावेज में स्थान-स्थान पर इससे पूर्व, याने सन् 1968 की शिक्षा नीति का, उल्लेख किया गया है। पाठकों की सुविधा के लिए सन् '68 की शिक्षा नीति तथा कोठारी आयोग के आवश्यक अंश हमने विशेष रूप से उद्धृत किये हैं।

वैसे सन् 1968 के अक्टूबर माह की "शिक्षा" में (पृ.सं. 19-22 पर) सन् 1968 वाली शिक्षा-नीति अविकल प्रकाशित हुई है। तुलनात्मक अध्ययन करने वालों के लिए नई नीति के साथ-साथ पुरानी को भी जानना जरूरी हो जाता है। इस दस्तावेज़ का हिन्दी रूपान्तरण श्री भवानी शंकर व्यास 'विनोद' ने किया है। — संपादक

भाग 1

प्रारंभिका

1.1 शिक्षा मानव इतिहास के प्रारम्भ से ही अपनी पहुंच एवं क्षेत्र को विकसित करती रही है, उसे व्यापक एवं वैविध्यपूर्ण बनाती रही है। प्रत्येक देश की अपनी एक अद्वितीय सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान होती है। वह उसे अभिव्यक्ति देने के लिए शिक्षा की एक ऐसी पद्धति का विकास करता है जो युग की चुनौतियों का सामना करने में भी समर्थ हो। इतिहास में ऐसे क्षण आते हैं जबकि प्राचीन पद्धति को एक नयी दिशा देनी होती है। और वह क्षण आ गया है, आज।

1.2. देश आर्थिक एवं तकनीकी विकास के जिस बिन्दु पर आ पहुँचा है वहाँ यह आवश्यक हो जाता है कि हम उपलब्धियों से अधिकतम लाभ लेने का प्रयास करें — असाधारण प्रयास। साथ ही इस बात को भी सुनिश्चित करें कि परिवर्तन का लाभ सभी वर्गों को मिलना है। शिक्षा इस लक्ष्य का राजमार्ग है — मंजिल का रास्ता है।

1.3. इसी लक्ष्य को सामने रखकर भारत सरकार ने जनवरी, 1985 में घोषणा की थी कि देश के लिए एक नयी शिक्षा नीति का निर्माण होगा। शिक्षा की वर्त्तमान स्थिति के परिदृश्य का एक विस्तृत विश्लेषण किया गया; फिर देशभर में चर्चा हुई, संवाद की स्थिति बनी और भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से आये हुए विचारों और सुझावों का अध्ययन किया गया।

1968 की शिक्षा नीति और उसके बाद की स्थिति

1.4. स्वातंत्र्योत्तर भारत में 1968 की शिक्षा नीति को शिक्षा के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण कदम के रूप में मानना होगा। इसने राष्ट्रीय प्रगति के साथ-साथ समान नागरिकता एवं संस्कृति का लक्ष्य रखा तथा राष्ट्रीय एकीकरण की भावना को बलवती बनाया। इसका जोर शिक्षा के क्रांतिकारी पुनर्रचाव पर था ताकि सभी स्तरों पर उसकी गुणवत्ता में सुधार हो, विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र पर अधिक ध्यान दिया जाए, नैतिक मूल्यों का विकास हो तथा शिक्षा और जन-जीवन के बीच में गहरा तालमेल स्थापित हो सके। उनके बीच कोई अन्तराल न रहे; वे एकमेक हो जाएं।

1.5. तब से लेकर अब तक देश में सभी स्तरों पर शिक्षा-सुविधाओं में विस्तार हुआ है। नब्बे प्रतिशत ग्रामीण बस्तियों में एक किलोमीटर की परिधि में विद्यालय खुल गये हैं। अन्य सभी स्तरों पर भी काफी विस्तार हुआ है। एक वृहद् संवर्धन है यह।

1.6. पूरे देश में शिक्षा के समान ढाँचे की स्वीकृति और अधिकांश राज्यों द्वारा 10+2+3 शिक्षा प्रणाली का प्रचलन शायद सर्वाधिक उल्लेखनीय विकास है। विद्यालय-पाठ्यक्रम में लड़कों और लड़कियों के लिए समान शिक्षा की व्यवस्था के साथ-साथ गणित और विज्ञान को अनिवार्य विषयों के रूप में शुरू किया गया है तथा कार्यानुभव को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

1.7. अवर स्नातक स्तर पर पाठ्य-विषयों की पुनः संरचना से शुरूआत की गई थी। उधर अधिस्नातक स्तर पर विशिष्ट शिक्षा व शोध क्षेत्रों में उच्च अध्ययन केन्द्रों की स्थापना भी की गई थी। तभी तो आज हम शिक्षित मानव शक्ति की पूर्ति करने में समर्थ हो सके हैं।

1.8. यद्यपि ये उपलब्धियाँ अपने आप में काफी प्रभावोत्पादक है पर यह बात भी सही है कि 1968 की शिक्षा नीति के सामान्य सूत्रों की क्रियान्विति नहीं हो सकी। उनकी विस्तृत कार्य नीति पूरी नहीं की जा सकी। न तो उन्हें संगठनात्मक और आर्थिक सम्बल ही मिला और न विशिष्ट दायित्वों का निर्धारण हो सका। नतीजा क्या हुआ। प्रवेश, गुणात्मकता, संख्या, उपयोगिता एवं आर्थिक लागत — सभी दृष्टियों से वर्ष-दर-वर्ष समस्याएँ बढ़ती ही चली गईं और आज तो उनका आकार इतना बढ़ गया है कि उनसे जूझना अनिवार्य हो गया है।

1.9. भारत की शिक्षा आज चौराहे पर खड़ी है। आज की आवश्यकता की पूर्ति न तो सामान्य रेखीय विस्तार से हो सकती है और न सुधार की वर्त्तमान गति या प्रकृति से।

1.10. भारतीय विचारधारा में मानव मनुष्य अपने आप में एक ऐसी पूंजी है; एक ऐसा कीमती राष्ट्रीय संसाधन है जिसे हमें पूरी कोमलता और सावधानी से, पूरी गतिशीलता से संजोना है, संवारना है; पोषित करना और विकसित करना है। जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रत्येक चरण पर मनुष्य के विकास की सभी समस्याएं एवं आवश्यकताएं एक दूसरे से भिन्न हैं। उनके दायरे अलग-अलग हैं। तभी तो यह जरूरी है कि इस गतिशील एवं ऊर्जा जटिल विकास-प्रक्रिया में शिक्षा जैसे उत्प्रेरक कार्य की योजना को अति सावधानी से बनाया जाए तथा अत्यधिक संवेदनशीलता से लागू किया जाए।

1.11. भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन एक ऐसे दौर से गुजर रहा है जिसके सामने सनातन मूल्यों के क्षरण का खतरा मुंह बाये खड़ा है। धर्मनिरपेक्षता,

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 : प्रस्ताव

समान स्कूल पद्धति

4. (ख) सामाजिक एकता तथा राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा आयोग की सिफारिशों में बताई गई समान स्कूल पद्धति को अपनाया जाना चाहिए। सामान्य स्कूलों में शिक्षा के स्तर में सुधार करने के प्रयत्न किये जाने चाहिए। पब्लिक स्कूलों के समान विशेष स्कूलों में छात्रों का दाखिला योग्यता के आधार पर किया जाना चाहिए और सामाजिक वर्गों के पृथक्करण को बचाने के लिए फीस माफी का अनुपात निहित कर देना चाहिए। परन्तु इससे संविधान के अनुच्छेद 30 के अन्तर्गत अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

कोठारी आयोग की रिपोर्ट से उद्धृत

....सभी बच्चों या समाज के हर स्तर के सभी योग्य बच्चों को अच्छी शिक्षा सुलभ करने के स्थान पर, अच्छी शिक्षा केवल उन मुट्ठी भर लोगों को उपलब्ध है जिनका चुनाव प्रतिभा के आधार पर नहीं, अपितु फीस चुकाने की क्षमता के आधार पर किया जाता है, इससे योग्यता का समग्र राष्ट्रीय पूल बनाने और उसकी वृद्धि करने में रुकावट आती है। इस प्रकार यह स्थिति अलोकतांत्रिक है तथा एक समतापूर्ण समाज के आदर्श से मेल नहीं खाती। साधारण जनता के बच्चों को घटिया प्रकार की शिक्षा लेने के लिए विवश होना पड़ता है और चूंकि छात्रवृत्तियों की योजना भी बहुत लंबी-चौड़ी नहीं है, अतः कभी-कभी इन बच्चों से योग्यतम बच्चे भी इन स्कूलों में प्रवेश पाने में असमर्थ रहते हैं, जबकि आर्थिक सुविधा-प्राप्त माता-पिता अपने बच्चों के लिए अच्छी शिक्षा 'खरीदने' में समर्थ होते हैं। यह बात न केवल गरीबों के बच्चों के लिए बुरी है, अपितु अमीर और सुविधा-प्राप्त वर्गों के बच्चों के लिए भी बुरी है। थोड़े समय के लिए इन्हें इससे यह सुविधा अवश्य मिल जाती है कि वे अपनी स्थिति बनाए रखें और उसे सुदृढ़ कर सकें। किन्तु यह अनुभव किया जाना चाहिए कि अंततोगत्वा उनका स्वयं का हित इसी में है कि वे साधारण जनता के साथ अपने को एक करें। अपने बच्चों को अलग-अलग रख कर वे गरीबों के बच्चों के जीवन और अनुभवों में शामिल होने से तथा जीवन की वास्तविकताओं के संपर्क में आने से रोकते हैं। सामाजिक संश्लेषण को कमजोर बनाने के अतिरिक्त वे अपने बच्चों की शिक्षा को बलहीन तथा अपूर्ण बनाते हैं।

यदि इन बुराइयों को दूर करना है और शिक्षा प्रणाली को सामान्य राष्ट्रीय विकास तथा सामाजिक और राष्ट्रीय एकीकरण का विशेष रूप से एक शक्तिशाली साधन बनाना है तो हमें लोक-शिक्षा की ऐसी समान स्कूल पद्धति की ओर कदम बढ़ाना चाहिए।

- जो जाति, सम्प्रदाय, समाज, धर्म, आर्थिक परिस्थिति और सामाजिक प्रतिष्ठा का विचार किये बिना सभी बच्चों को सुलभ हो;
- जिसमें अच्छी शिक्षा का अवसर प्राप्त करना, धन या वर्ग पर निर्भर न कर प्रतिभा पर निर्भर करे;
- जो सभी स्कूलों में एक समुचित स्तर बनाए रखेगी तथा कम से कम एक युक्तिसंगत संख्या में अच्छे स्तर की संस्थाएं सुलभ करायेगी;
- जिसमें पढ़ाई की कोई फीस नहीं ली जाएगी; और
- जो औसत पिता की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी, ताकि उसे इस प्रणाली से बाहर के खर्चीले स्कूलों में अपने बच्चों को भेजने की आवश्यकता साधारणतः अनुभव नहीं होगी। [पृष्ठ 12]

समाजवाद, प्रजातंत्र एवं व्यावसायिक आचार-शास्त्र जैसे मूल्य लगातार दबाव की स्थिति में है।

1.12. ऐसे में दयनीय संगठनात्मक स्वरूप और विपन्न सामाजिक सेवाओं के बीच जीने वाले हमारे ग्रामीण क्षेत्रों को प्रशिक्षित एवं शिक्षित युवकों का लाभ तब तक नहीं मिलेगा जब तक शहरी एवं ग्रामीण असमानताओं को कम नहीं किया जाए और जब तक रोजगार के विविध अवसरों के समुचित वितरण के सुनिश्चित उपाय नहीं किये जाएं।

1.13. आने वाले दशकों की एक माँग और है। जनसंख्या की वृद्धि-दर को काफी नीचे लाया जाए। इस उद्देश्य की सम्पूर्ति का एकमात्र सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटक है नारियों की साक्षरता एवं शिक्षा का।

1.14. आने वाले दशकों में जीवन के सामने नये-नये तनाव तो आयेंगे ही लेकिन अभूतपूर्व अवसर भी आयेंगे। लोग नये परिवेश का लाभ ले सकें इसके लिए जरूरी है कि मानव-संसाधन-विकास की नयी रूपरेखा तैयार की जाए। आने वाली पीढ़ियों को नये-नये विचारों को आत्मसात करना है – पूरी सृजनात्मकता से और निरन्तरता से। उन्हें मानव-मूल्यों और सामाजिक न्याय से प्रतिबद्ध होना है। पुष्ट प्रतिबद्धता की भावना भरी जानी है उनमें। और इस सबके लिए उत्तम शिक्षा जरूरी है।

1.15. इसके अतिरिक्त भी नयी-नयी चुनौतियों एवं सामाजिक आवश्यकताओं के संदर्भ में सरकार के लिए आवश्यक हो गया है कि नयी शिक्षा-नीति को बनाए और लागू करे। आज की स्थिति का मुकाबला इससे कम अवदान से ही हो नहीं सकता।

भाग 2

शिक्षा का सार-तत्व और उसकी भूमिका

2.1. हमारे राष्ट्रीय परिदृश्य में शिक्षा सबके लिए आवश्यक है। यह हमारे भौतिक, आध्यात्मिक एवं सर्वांगीण विकास का एक मूलभूत आधार है।

2.2. शिक्षा एक सांस्कृतिक भूमिका है। यह संवेदना और दृष्टि को परिष्कृत करती है और ये दोनों तत्व राष्ट्रीय सामं-

जस्य, वैज्ञानिक रुझान, दिमाग एवं आत्मा की स्वतंत्रता में योगदान करते हैं। हमारे संविधान में वर्णित समाजवाद, धर्म-निरपेक्षता एवं प्रजातंत्र के लक्ष्यों की पूर्ति भी इसी से संभव हो।

2.3. शिक्षा अर्थतंत्र के विभिन्न स्तरों के लिए मानव शक्ति का निर्माण करती है। शिक्षा ही वह आधार है जो शोध और विकास का उन्नयन कर सकती हैं और ये शोध-विकास ही राष्ट्रीय आत्म-निर्भरता की गारंटी हैं।

2.4. संक्षेप में, वर्तमान और भविष्य के लिए शिक्षा अपने आप में एक अद्वितीय निवेश है। यह आधारभूत सिद्धान्त ही राष्ट्रीय शिक्षा का मूल स्वर है; उसकी कुञ्जी है।

भाग ३
शिक्षा की राष्ट्रीय प्रणाली

3.1. शिक्षा की राष्ट्रीय नीति की कल्पना जिन सिद्धान्तों के आधार पर की गई है, वे सब हमारे संविधान में सन्निहित हैं।

3.2. शिक्षा की राष्ट्रीय पद्धति की अवधारणा का तात्पर्य है कि एक निश्चित स्तर तक सभी छात्रों को, चाहे वे किसी भी जाति, सम्प्रदाय, लिंग अथवा भौगोलिक भूखण्ड के क्यों न हों, एक स्तरीय शिक्षा, जिसकी तुलना किसी भी उत्तम शिक्षा प्रणाली से की जा सके, प्राप्त करने का अधिकार मिल जाये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकार उपयुक्त धनराशि वाले कार्यक्रम प्रारम्भ करेगी। 1986 की नीति की अनुशंसा के आधार पर **समान स्कूल पद्धति** के विद्यालय की दिशा में भी प्रभावशाली कदम उठाये जायेंगे।

3.3. शिक्षा की राष्ट्रीय पद्धति में शिक्षा के एक समान ढाँचे पर विचार किया गया है। देश के सभी भागों में अब 10+2+3 प्रणाली को स्वीकार कर लिया गया है। 10 वर्षों की शिक्षावधि के विभाजन के लिए इस बात का प्रयास किया जायेगा कि उसमें 5 वर्षों की प्राथमिक, 3 की उच्च प्राथमिक एवं 2 की माध्यमिक शिक्षा हो।

3.4. शिक्षा की यह पद्धति राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के एक ऐसे ढाँचे पर आधारित होगी जिसमें समान पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कुछ लचीले घटक भी होंगे। समान पाठ्यक्रम में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास एवं संवैधानिक दायित्व के अतिरिक्त ऐसी विषय सामग्री भी सम्मिलित होगी जो राष्ट्रीय पहचान का विकास कर सके। ये तत्व किसी विषय विशेष के मुहताज नहीं होंगे वरन् अनेक विषयों में समाविष्ट रहेंगे और इनका लक्ष्य मूल्यों का विकास करना होगा। ये मूल्य हैं – भारत की समान सांस्कृतिक विरासत, समानता का आदर्श, प्रजातंत्र, धर्म निरपेक्षता, लिंग समभाव, पर्यावरण की रक्षा, सामाजिक बंधनों का ह्रास, छोटे परिवार की विचार धारा को मान्यता एवं वैज्ञानिक रुझान का विकास आदि। शिक्षा के सारे कार्यक्रम धर्मनिरपेक्ष मूल्यों के दृढ़ीकरण के आधार पर ही चलाये जायेंगे।

3.5. भारत ने हमेशा पूरे विश्व की एक परिवार माना हैं तथा राष्ट्रों में आपसी शांति, सद्भाव एवं समझदारी के लिए कार्य किया है। इसी पुरातन परम्परा के प्रति निष्ठा रखते हुए शिक्षा को भी इस विश्व-भावना को मजबूत करना है तथा नयी पीढ़ी को अंतर्राष्ट्रीय सहयोग एवं शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए तैयार करना है। इस पक्ष की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

3.6. समानता लानी है तो आवश्यक है कि सबको शिक्षा तक पहुंचने के अवसर मिलें और उनमें सफल होने की स्थितियाँ भी प्राप्त हों। उधर समान पाठ्यक्रम के माध्यम से भी सब लोगों की अंतर्निहित समानता की चेतना का विकास किया जाएगा। उद्देश्य यह है कि जन्म के संयोग एवं सामाजिक वातावरण के कारण जो पूर्वाग्रह एवं जटिलताएं सम्प्रेषित होती रही हैं उनको समाप्त कर दिया जाए।

3.7. शिक्षा के प्रत्येक चरण के लिए सीखने का एक न्यूनतम स्तर तय कर दिया जाएगा। इस बात का भी प्रयास किया जाएगा कि छात्रों में देश के भिन्न-भिन्न हिस्सों की विविध संस्कृति एवं सामाजिक प्रणालियों की समझ पैदा हो। सम्पर्क भाषा के विकास के अतिरिक्त अन्य भाषाओं की पुस्तकों के बहुल अनुवाद छपवाने तथा बहुभाषीय शब्दकोशों एवं शब्द संग्रहों को प्रकाशित करने के कार्यक्रम भी अपनाये जायेंगे। युवा पीढ़ी को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा कि वह अपनी दृष्टि एवं छवि से भारत की पुनः खोज कर सके यानी भारत को नयी दृष्टि से देख सके।

3.8. उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सामान्य रूप से तथा तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से ऐसे कदम उठाये जायेंगे जिनसे अंतरक्षेत्रीय गतिशीलता को बल मिले। समुचित योग्यता रखने वाला कोई भी भारतीय उच्च एवं तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर सकेगा – चाहे वह भारत के किसी भी भूखण्ड का निवासी क्यों न हो। हमें अपने विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षा की अन्य संस्थाओं के सार्वभौम चरित्र को भी रेखाङ्कित करते रहता है।

3.9. शोध हो या विकास; तकनीकी शिक्षा का क्षेत्र हो या विज्ञान का; इस बात के विशेष कदम उठाये जायेंगे कि देश की भिन्न-भिन्न संस्थाओं के बीच एक ऐसा तंत्र, एक ऐसा तालमेल स्थापित हो जाए कि वे अपने संसाधनों के संचय एवं संग्रहण के द्वारा राष्ट्रीय महत्त्व की प्रायोजनाओं में हिस्सा ले सकें।

3.10. और पूरा देश इस बात का दायित्व लेगा कि शैक्षिक रूपान्तरण के कार्यक्रमों के लिए संसाधन मुहैया किये जाएँ। चाहे ये कार्यक्रम असमानता को कम करने के हों अथवा प्राथमिक शिक्षा की सार्वजनीनता के; प्रौढ़-साक्षरता के हों अथवा वैज्ञानिक तकनीकी शोध के, संसाधन तो प्राप्त करने ही होंगे।

3.11. शैक्षिक प्रक्रिया का लक्ष्य है जीवनपर्यन्त शिक्षा। इसके लिए सार्वभौमिक साक्षरता आवश्यक है। एक प्रकार से यह पहले से ही मानी हुई बात है। युवकों, गृहिणियों, कृषि तथा उद्योग के कामगारों एवं व्यवसायिक कर्मियों को इस बात के अवसर दिये जायेंगे कि वे अपनी रुचि एवं गति से शिक्षा को जारी रख सकें। भविष्य खुली एवं दूरस्थ शिक्षा की दिशा में बढ़ रहा है। और हमारे प्रयास भी इसी दिशा में अग्रसर होंगे।

3.12. शिक्षा की राष्ट्रीय पद्धति को निश्चित आकार देने में कई संस्थाएं महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। हमें इनको मजबूत करना होगा। ये संस्थाएं हैं : विश्व विद्यालय अनुदान आयोग, अखिल भारतीय

तकनीकी शिक्षा परिषद्, अखिल भारतीय कृषि शोध परिषद् एवं भारतीय चिकित्सा परिषद्। इन सारी संस्थाओं में एक एकीकृत योजना लागू की जाएगी जिनसे ये आपस में क्रियात्मक सम्पर्क स्थापित करके शोध एवं अधिस्नातक शिक्षा के कार्यक्रमों को मजबूती से लागू कर सकें। संस्थाएं तो और भी हैं। उक्त सभी संस्थान राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, राष्ट्रीय शैक्षिक प्रायोजन एवं प्रशासन संस्थान एवं विज्ञान तथा तकनोलोजी शिक्षा की अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् के साथ मिलकर शिक्षा नीति की क्रियान्विति में सहयोग देंगी। यह अपने आप में सहभागीत्व की एक अनूठी मिसाल होगी।

सार्थक साझेदारी

3.13. 1976 के संविधान संशोधन से शिक्षा समवर्ती सूची में आ गई – दूरगामी परिणामों के एक कदम के रूप में। इसकी तात्विक, आर्थिक एवं प्रशासनिक परिणति के लिए एक ऐसी व्यवस्था आवश्यक हो गई कि जिसमें राष्ट्रीय जीवन के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में केन्द्र तथा राज्य सरकारों की भूमिकाओं और जिम्मेदारियों में साझेदारी हो। शिक्षा के सम्बन्ध में राज्यों की भूमिका और जिम्मेदारी तो फिर भी अपरिवर्तित रहेगी लेकिन केन्द्र सरकार अपने ऊपर एक बहुत बड़ी जिम्मेवारी ले लेगी। यह जिम्मेदारी होगी शिक्षा के राष्ट्रीय एवं एकीकृत चरित्र के विकास की; स्तरों की गुणात्मकता को बनाये रखने की; पूरे देश में शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं के अध्ययन और नियमन की और विकास के लिए मानव शक्ति की अवाप्ति की। मानव शक्ति – जो शोध एवं उच्च अध्ययन की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी, शिक्षा, संस्कृति एवं मानव संसाधन विकास के अंतर्राष्ट्रीय पहलुओं को ध्यान में रखेगी और पूरे देश में शिक्षा के पिरैमिड के प्रत्येक स्तर पर श्रेष्ठता का अवगाहन करेगी। समवर्ती सूची का मतलब एक ऐसी साझेदारी से है जो सार्थक भी है और चुनौतीपूर्ण भी। राष्ट्रीय नीति शाब्दिक और आत्मिक रूप से (मनसा, वाचा, कर्मणा) इसी दिशा में अग्रसर होगी।

भाग 4

समानता के लिए शिक्षा

असमानताएं

4..1. नयी शिक्षा नीति असमानताओं के निवारण और शैक्षिक अवसरों की समान उपलब्धि पर जोर देगी। विशेष कर उन लोगों की विशिष्ट आवश्यकताओं पर जोर दिया जाएगा, जो अब तक समानता से वंचित रहे हैं।

शिक्षा : महिलाओं के लिए समानता की

4.2. शिक्षा को महिलाओं की स्थिति में आधारभूत परिवर्तन लाने का अभिकरण बनाया जाएगा। शिक्षा नीति का सुविचारित झुकाव महिलाओं की तरफ होगा ताकि विगत की संचित विषमताओं के लेखे-जोखे को बराबर किया जा सके। महिलाओं की सबल बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति एक सकारात्मक हस्तक्षेपकारी भूमिका अदा करेगी। वह नये मूल्यों के विकास को गति देगी। और यह कार्य होगा पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों की पुनर्रचना के द्वारा; शिक्षकों, निर्णायकों एवं प्रशासकों के प्रशिक्षण और अभिस्थापन द्वारा तथा शिक्षा संस्थाओं की सक्रिय भागीदारी द्वारा। यह एक विश्वास एवं सामाजिक निर्माण का कार्य होगा। विभिन्न पाठ्यक्रमों एवं पाठ्यविषयों में महिलाओं संबंधी अध्ययन का समावेश होगा। शिक्षा-संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाएगा कि महिलाओं के विकास के लिए सक्रिय कार्यक्रमों को अपनाएं।

4.3. नारियों की निरक्षरता का निवारण करने तथा शिक्षा में उनके प्रवेश और धारकता की रुकावटों को दूर करने के लिए प्राथमिक शिक्षा को सर्वाधिक प्राथमिकता मिलेगी। यह कार्य तीनों विधियों से होगा – विशेष सम्बल-सेवाओं द्वारा, समयबद्ध लक्ष्य-निर्धारण द्वारा और प्रभावशाली प्रबोधन द्वारा। विशेष जोर इस बात पर होगा कि नारियाँ व्यावसायिक, तकनीकी एवं अन्य धंधों के विभिन्न स्तरों पर भागीदारी कर सकें। न सहमें, न पिछड़ें, न ठिठकें। भेदभाव न बरतने की नीति का पूरी तन्मयता से पालन किया जाएगा। व्यावसायिक उपक्रमों में लैंगिक वैशिष्टय को दूर किया जाएगा ताकि पुरुषों के एक मात्र वर्चस्व को समाप्त किया जा सके। नारियों को गैर पारम्परिक धंधों में तो भाग लेना ही है, वर्तमान एवं भावी प्रौद्योगिकी में भी सक्रिय भूमिका अदा करनी है।

अनुसूचित जातियों की शिक्षा

4.4. अनुसूचित जातियों की शिक्षा के विकास का केन्द्रीय ध्यान इस बात पर रहेगा कि वे शिक्षा के सभी स्तरों तथा क्षेत्रों में सवर्ण लोगों के बराबर आ जाएं। यह बराबरी चारों स्तरों पर होगी : ग्रामीण पुरुषों व महिलाओं के स्तर पर तथा शहरी पुरुषों व महिलाओं के स्तर पर।

4.5. इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए निम्न उपायों पर विचार किया गया है :–

(i) दरिद्र एवं अकिंचन परिवारों को प्रोत्साहन, ताकि वे 14 वर्ष की उम्र तक के बच्चों को विद्यालयों में भेज सके।

(ii) पहली कक्षा से ही उन परिवारों के बच्चों को प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति का प्रावधान, जो सफाई का कार्य करते हैं अथवा चमड़ा उतारने व कमाने का काम करते हैं। ऐसे परिवारों के सारे के सारे बच्चों को इस योजना के अन्तर्गत लिया जाएगा, फिर चाहे उनके परिवारों की आय कुछ भी क्यों न हो। इनके लिए एक समयबद्ध और लक्ष्यबद्ध कार्यक्रम लागू होगा।

(iii) अनुसूचित जाति के बच्चों के नामांकन, विद्यालय में ठहराव तथा अध्ययन के सफल समापन में कहीं भी रुकावट न हो, इस बात के लिये सूक्ष्म योजनाओं का निर्माण एवं सत्यापन की लगातार व्यवस्था।

(iv) अनुसूचित जातियों में से अध्यापकों की नियुक्ति।

(v) जिला मुख्यालयों पर छात्रावासों में रहने की सुविधा। यह काम एक समयबद्ध क्रमिक कार्यक्रम के आधार पर होगा।

(vi) विद्यालय भवनों, बालवाड़ियों एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की ऐसे स्थानों पर व्यवस्था जहाँ अनुसूचित जातियों को पूर्ण सहभागीत्व की सुविधा मिल सके।

(vii) अनुसूचित जातियों के बच्चों को पूर्ण शैक्षिक सुविधायें प्राप्त हों इसलिये एन. आर. ई. पी. तथा आर. एल. ई. जी. पी. के संसाधनों का उपयोग, तथा

(viii) शैक्षिक प्रक्रिया में अनुसूचित जातियों के बच्चों के सहभागीत्व में वृद्धि के लिए निरन्तर नवाचारों की व्यवस्था।

जनजातियों की शिक्षा

4.6 जनजातियों के बच्चों को अन्य लोगों के बराबर लाने के लिए निम्न उपाय काम में लाये जायेंगे :–

(i) जनजाति क्षेत्रों में विद्यालय खोलने में प्राथमिकता दी जायेगी। इन क्षेत्रों में विद्यालय भवनों का निर्माण शिक्षा के लिए आवंटित सामान्य मद में से तो होगा ही; एन.आर.ई.पी. तथा आर. एल.ई.जी.पी. के मदों से भी किया जायगा। उक्त दोनों संस्थायें जनजाति कल्याण के कार्यों में गतिशील हैं।

(ii) जनजातियों के सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण की अपनी चारित्रिक विशेषतायें हैं। कई मामलों में तो उनकी मौखिक भाषा-परम्परायें भी मिलती हैं। स्वतः ही इस बात की आवश्यकता हो जाती है कि हम ऐसे पाठ्यक्रमों का निर्माण तथा शैक्षिक पाठ्य-सामग्री तैयार करें ताकि प्रारम्भिक स्तर पर उनकी मौखिक भाषा को ही माध्यम बनाया जा सके। साथ ही इस बात की व्यवस्था हो कि वे शीघ्र ही क्षेत्रीय भाषा को अपनाने की स्थिति में आ जाएं।

(iii) जनजातियों के शिक्षित एवं होनहार युवकों की इस बात के लिए प्रोत्साहित एवं प्रशिक्षित किया जाएगा कि वे जनजातियों में अध्यापन कार्य कर सकें।

(iv) बड़ी तादाद में आवासीय एवं आश्रम-विद्यालय स्थापित किये जायेंगे।

(v) जनजातियों की विशेष आवश्यकताओं एवं जीवन विधियों को दृष्टिगत रखते हुए उनके लिए प्रोत्साहन की योजनायें लागू की जायेंगी। उच्च शिक्षा की छात्र-वृत्तियों में तकनीकी, वृत्यात्मक एवं अर्द्ध वृत्यात्मक पाठ्यक्रम सम्मिलित किये जायेंगे। विभिन्न पाठ्यक्रमों में जनजाति छात्रों की उपलब्धियों को सुधारने के लिए विशेष उपचारात्मक विधियाँ एवं कार्यक्रम अपनाये जायेंगे। इससे सामाजिक-मनोवैज्ञानिक रुकावटों को दूर किया जा सकेगा।

(vi) जनजातियों की घनी बस्तियों वाले क्षेत्रों में प्राथमिकता के आधार पर आंगनवाड़ियाँ, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र खोले जाएंगे।

(vii) सभी स्तरों के लिए निर्धारित पाठ्यक्रमों में जनजातियों की सम्पन्न सांस्कृतिक पहचान की चेतना का आविर्भाव किया जाएगा। उनकी विराट सर्जनात्मक प्रतिभा का उल्लेख भी रहेगा।

शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े अन्य वर्ग तथा क्षेत्र

4.7. समाज के शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों को उपयुक्त अभिप्रेरण दिया जाएगा, विशेष तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में। पहाड़ी व रेतीले जिलों, पहुँच से परे के दूरस्थ क्षेत्रों तथा द्वीपों में पर्याप्त संस्थाएं स्थापित की जाएंगी।

अल्पसंख्यक

4.8 कुछ अल्पसंख्यक लोग शैक्षिक दृष्टि से वंचित एवं पिछड़े हुए हैं। समानता एवं सामाजिक न्याय का तकाजा है कि इन समूहों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए।

स्वाभाविक है कि ऐसा करते समय उस संवैधानिक व्यवस्था का पालन किया जायेगा जो अल्पसंख्यक समुदाय की अपनी संस्थाएं गठित करने, संचालित करने एवं अपनी भाषा तथा संस्कृति को समुन्नत करने की गारंटी देती है। इस गारन्टी की अनुपालना तो होगी लेकिन ऐसी व्यवस्था भी की जाएगी ताकि पाठ्यपुस्तकों के निर्माण एवं समस्त विद्यालय गतिविधियों में वस्तुनिष्ठता प्रदर्शित हो एवं समान पाठ्यक्रम की भावना के अनुसार समान राष्ट्रीय उद्देश्यों एवं आदर्शों पर आधारित एकीकृत समन्वय का विकास संभव हो सके।

विकलांग

4.9. विकलांग शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए :—(i) शारीरिक एवं मानसिक रूप से विकलांग बच्चों का अन्य स्वस्थ बालकों के साथ समान सहभागीत्व के आधार पर समन्वय करना, (ii) उन्हें सामान्य विकास के लिए तैयार करना तथा (iii) जीवन का साहस और विश्वास के साथ सामना करने की योग्यता उत्पन्न करना। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए निम्न कदम उठाये जायेंगे :—

(1) जहाँ कहीं भी सम्भव हो, हाथ-पाँव जैसी इन्द्रियों के विकलांगों अथवा साधारण विकलांगता वाले बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था अन्य बच्चों के साथ ही होगी।

(2) गंभीर रूप से विकलांग बच्चों के लिए जहाँ तक सम्भव हो, जिला मुख्यालयों पर छात्रावास सहित विशेष विद्यालयों की व्यवस्था होगी।

(3) शारीरिक रूप से अयोग्य (विकलांग) बच्चों के लिए व्यावसायिक शिक्षा के समुचित प्रबन्ध किये जायेंगे।

(4) विकलांग वच्चों की कठिनाइयों के प्रसंग में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का पुनर्गठन किया जायेगा। ऐसा करते समय प्राथमिक कक्षाओं के अध्यापकों पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

(5) प्रत्येक संभव तरीके से यह प्रयास होगा कि अक्षम विकलांग बच्चों की शिक्षा के स्वैच्छिक उपायों को बढ़ावा मिले।

प्रौढ़ शिक्षा

4.10. हमारे प्राचीन ग्रंथों में शिक्षा की व्याख्या "सा विद्या या विमुक्तये" के रूप में की गई हैं यानी विद्या वह है जो अज्ञान एवं अत्याचार से मुक्ति दिलाये। वर्त्तमान विश्व में इसका आशय पढ़ने-लिखने की योग्यता से होता है क्योंकि यही सीखने का मुख्य आधार है। इससे प्रौढ़ शिक्षा और प्रौढ़ साक्षरता का महत्त्व स्वयंमेव स्पष्ट हो जाता है।

4.11. आज के विकास का एक गंभीर बिन्दु यह है कि कौशलों का निरन्तर उन्नयन किया जाए ताकि समाज द्वारा वांछित मानव-संसाधन समुचित योग्यता एवं संख्या में प्राप्त हो सकें। चूंकि लाभान्वित होने वाले लोगों द्वारा विकास-प्रक्रिया में भाग लेना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है अतः राष्ट्रीय उद्देश्यों के अनुरूप प्रौढ़ शिक्षा के व्यवस्थित कार्यक्रमों को संगठित किया जायेगा। उनका पुनरीक्षण होगा; दृढ़ीकरण होगा। ये राष्ट्रीय उद्देश्य हैं :— गरीबी-उन्मूलन, राष्ट्रीय एकीकरण, पर्यावरण-संरक्षण, लोगों की सांस्कृतिक सर्जना का संचेतन, छोटे परिवार के आदर्श का पालन तथा नारी समानता का उन्नयन आदि।

4.12. 15-35 आयु-वर्ग की निरक्षरता की समाप्त करने का संकल्प पूरे राष्ट्र को लेना चाहिए। विविध प्रकृति के व्यापक साक्षरता कार्यक्रमों से सभी को प्रतिबद्ध होना है, चाहे वे केन्द्रीय अथवा राज्य सरकारें हों, राजनीतिक दल अथवा उनके जन-संगठन हों अथवा संचार माध्यम या शैक्षिक संस्थाएं हों। इस विराट अभियान में अध्यापकों, छात्रों, युवकों, स्वैच्छिक संगठनों एवं नियोक्ताओं आदि को भारी संख्या में आगे आना होगा। प्रौढ़ साक्षरता के शैक्षणिक रूपों में

सुधार करने के लिए विभिन्न शोध संस्थाएं जो कुछ भी कर रही हैं, उनके प्रयत्नों में सामंजस्य लाने के उपाय किये जायेंगे। व्यापक साक्षरता कार्यक्रम में केवल साक्षरता से काम नहीं चलेगा। साक्षरता के अतिरिक्त इसमें कौशल का क्रियात्मक ज्ञान, अध्येताओं में सामाजिक, आर्थिक वास्तविकताओं की चेतना तथा परिवर्तन की संभावना के उपायों का भी समावेश होगा।

4.13. भिन्न-भिन्न विधियों एवं माध्यमों से प्रौढ़ शिक्षा का एक विशाल व्यापक कार्यक्रम चलाया जायेगा। इसमें निम्न बातें समाविष्ट होंगी :

(i) ग्रामीण क्षेत्रों में निरन्तर शिक्षा के केन्द्रों की स्थापना।

(ii) नियोक्ताओं, श्रम संघों और सम्बन्धित सरकारी संस्थाओं द्वारा कार्मिकों की शिक्षा की व्यवस्था।

(iii) माध्यमिक शिक्षा से ऊपर की संस्थाएं।

(iv) पुस्तकों, पुस्तकालयों एवं वाचनालयों का व्यापक प्रबंध।

(v) जन एवं समूह शिक्षा के माध्यम के रूप में रेडियो, टेलिविजन एवं फिल्मों जैसे संचार साधनों का उपयोग।

(vi) अधिगम समूहों एवं संगठनों का सृजन।

(vii) दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों का सूत्रपात।

(viii) स्वयं पठन में सहयोग, तथा

(ix) आवश्यकता एवं रुचियों पर आधारित व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम का गठन।

भाग 5

विविध स्तरों पर शिक्षा का पुनर्गठन

शैशव की सम्भाल और शिक्षा

5.1. शिक्षा की राष्ट्रीय नीति शिशुओं के विकास पर पूंजी निवेश के पक्ष में है – विशेषकर उन शिशुओं पर जो प्रथम पीढ़ी के हैं, यानी जिनके पिता या दादा ने कभी स्कूल का मुंह तक नहीं देखा।

5.2. शिशु विकास एक पावन कर्म है अतः शिशु-सम्भाल एवं शिक्षा कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी जाएगी। जहाँ तक सम्भव हो उसे शिशु-विकास सेवाओं के साथ समन्वित भी किया जाएगा। ऐसा करते समय शिशुओं के सुपोषण एवं स्वास्थ्य के साथ-साथ उनके शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक एवं भावात्मक विकास पर बल दिया जाएगा। प्राथमिक शिक्षा को सम्बल देना है अतः दिन के समय चलने वाले शिशु-सम्भाल केन्द्रों की व्यवस्था की जाएगी। इससे फायदा यह होगा कि घरों पर बच्चों की देखभाल करने वाली लड़कियाँ तथा गरीब वर्गों की कामकाजी महिलाएं भी विद्यालय में आ सकेंगी।

5.3. शिशु संभाल एवं शिक्षा के सभी कार्यक्रम शिशु-अभिस्थापित होंगे। इसमें क्रीड़ा पक्ष को तो विशेष महत्त्व मिलेगा ही, प्रत्येक शिशु की निजता पर भी ध्यान दिया जाएगा। पढ़ने, लिखने एवं गणित सम्बन्धी औपचारिक बातों के शीघ्र लागू होने को निरुत्साहित किया जाएगा। इन सभी कार्यक्रमों में स्थानीय लोगों का अधिकतम सहभागीत्व होगा।

5.4. पूर्व प्राथमिक शिक्षा एवं शिशु-संभाल केन्द्रों का सम्पूर्ण समन्वय किया जाएगा ताकि प्राथमिक शिक्षा की दृढ़ किया जा सके और उसके लिए संस्कारित बालक उपलब्ध हो सकें। साथ ही मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया को भी गति मिलती रहे। इस स्तर के तारतम्य में, विद्यालय स्वास्थ्य योजना की भी प्रभावी बनाया जाएगा।

प्राथमिक शिक्षा

5.5. प्राथमिक शिक्षा के प्रसंग में दो बातों पर विशेष बल होगा – (i) चौदह वर्षों की आयु तक सार्वजनीन नामांकन एवं विद्यालयों मे सार्वजनीन ठहराव तथा (ii) शिक्षा की गुणात्मकता में आधारभूत सुधार।

बाल-केन्द्रित अभिगम

5.6. बच्चे की विद्यालय में आने एवं सीखने के लिए प्रेरित किया जा सके, उसके लिए उसे मिलना चाहिए गर्मजोशी से भरा हुआ स्वागत एवं प्रोत्साहन का एक स्नेहिल वातावरण। सभी सम्बन्धित लोग बच्चे के कल्याण के लिए काम करें, उसे लाड़-दुलार और प्रेरणा दें तो बच्चा विद्यालय की ओर स्वतः ही उन्मुख होगा। प्राथमिक स्तर पर ही सीखने की प्रक्रिया बाल-केन्द्रित और क्रिया-आधारित होनी चाहिए। प्रथम पीढ़ी के बच्चों को तो अतिरिक्त ध्यान की आवश्यकता होगी। वे अपनी गति से बढ़ें और उनको उपचारात्मक निर्देश मिलते रहें – न रुकावट हो न गत्यवरोध, तो वे शिक्षा-क्षेत्र के साथ तालमेल बिठा सकेंगे।

ज्यों-ज्यों बच्चा बढ़ता रहे, ज्ञान के घटक भी बढ़ते रहेंगे तथा अभ्यास के माध्यम से कौशल का विकास होता रहेगा। प्राथमिक स्तर पर बच्चों को असफल नहीं करने की नीति बराबर चलेगी। मूल्यांकन सतत और निरंतर होगा और उसे यथासम्भव समेकित रूप से नहीं किया जायेगा। शिक्षा की पूरी पद्धति में से शारीरिक दण्ड की व्यवस्था की कठोरता से निकाल दिया जायेगा। सारा कार्य बच्चों की सुविधा से होगा – यहाँ तक कि विद्यालय एवं अवकाश के समय का नियमन भी उन्हीं की सुविधा से होगा।

विद्यालय सुविधाएं

5.7. प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था की जाएगी। प्रत्येक विद्यालय में कम से कम दो इतने बड़े कमरे अवश्य होंगे जहाँ किसी भी मौसम में बच्चे बैठ सकें। साथ हो आवश्यक उपकरणों को भी सुलभ किया जाएगा। इन उपकरणों में श्यामपट्ट तो होंगे ही, नक्शे, चार्ट्स, खिलौने और सीखने की अन्य सामग्रियाँ भी होंगी। प्रत्येक विद्यालय में कम से कम दो अध्यापक हों – जिनमें एक महिला अध्यापक भी होनी चाहिए। जहाँ तक संभव होगा शीघ्रातिशीघ्र प्रति कक्षा एक अध्यापक की व्यवस्था कर दी जाएगी। पूरे देश में एक क्रमबद्ध अभियान चलेगा – श्यामपट्ट अभियान। लक्ष्य रहेगा प्राथमिक विद्यालयों के सुधार का। इस प्रतीकात्मक अभियान से सरकारी, स्थानीय एवं स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ-साथ व्यक्तियों को भी जोड़ा जाएगा। जन-जन का अभियान बने यह – ऐसी चेष्टा की जाएगी। शाला भवन बनाने का पहला जिम्मा एन.आर.ई.पी. तथा आर.एल.ई.जी.पी. फंड का रहेगा।

अनौपचारिक शिक्षा

5.8. प्राथमिक शिक्षा के साथ-साथ एक विशाल एवं व्यवस्थित अनौपचारिक शिक्षा का कार्यक्रम भी चलेगा। विशेषकर उन बच्चों के लिए जो विद्यालय बीच में ही छोड़ देते हैं; उन बस्तियों के लिए जिनमें विद्यालय नहीं हैं, उन कामकाजी लड़के-लड़कियों के लिए जो दिन के समय विद्यालयों में नहीं जा सकते।

5.9. अनौपचारिक केन्द्रों के अधिगम-परिवेश को सुधारना आवश्यक है। इसके लिये आधुनिक प्रौद्योगिकी के उपकरणों का उपयोग किया जाएगा। अनुदेशक बनने के लिए स्थानीय समुदाय में से प्रतिभासम्पन्न एवं समर्पित स्त्री-पुरुषों का चयन होगा– उनके प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। इनमें से जो भी सुयोग्य पात्र पाए गए, उनको औपचारिक शिक्षा में प्रवेश की सुविधा दी जाएगी। अनौपचारिक शिक्षा की गुणात्मकता औपचारिक शिक्षा की तुलना में खरी उतरे – इस बात के लिए सभी आवश्यक कदम उठाये जायेंगे।

5.10. अनौपचारिक शिक्षा का पाठ्यक्रम समान राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के आधार पर बनेगा। फर्क यही होगा कि यह पाठ्यक्रम अध्येताओं की आवश्यकताओं और स्थानीय परिवेश को ध्यान में रखकर बनाया जाएगा और इसके निर्माण के लिए प्रभावशाली कदम उठाये जायेंगे। एक अन्तर और भी होगा। उच्चकोटि की अधिगम सामग्री का विकास किया जाएगा और यह सामग्री छात्रों को मुफ्त में मिलेगी। अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम में सहभागीत्व का एक ऐसा वातावरण रहेगा जिसमें कई बातों की व्यवस्था होगी, जैसे – खेलकूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, भ्रमण आदि।

5.11. अनौपचारिक शिक्षा का अधिकांश कार्य स्वैच्छिक संस्थाओं और पंचायती राज द्वारा होना है। इन संस्थाओं को समय पर और समुचित मात्रा में धन दिया जाएगा। इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के विकास के लिए सम्पूर्ण जिम्मेदारी सरकार की होगी।

एक संकल्प

5.12. विद्यालयों सें बच्चों की संख्या के क्षरण को रोकने पर उच्चतम प्राथमिकता दी जाएगी। बच्चे स्कूलों में बराबर जाते रहें – इसके लिए सावधानी से तैयार की गई कार्यनीतियाँ काम में ली जायेंगी। पूरे देश में आधारभूत स्तरों पर सूक्ष्म योजनायें लागू होंगी। उद्देश्य यही रहेगा कि बच्चे विद्यालयों में बने रहें – बीच में पढ़ाई छोड़कर न चले जायें। इस प्रयत्न को अधिक प्रभावी बनाने के लिए इसके साथ अनौपचारिक शिक्षा के जाल का समन्वय होगा। इस बात को सुनिश्चित किया जाएगा कि सन् 1990 तक बच्चे या तो विद्यालयों में अथवा अनौपचारिक केन्द्रों पर पाँच वर्ष का अध्ययन अवश्य पूरा कर लें। इसी प्रकार 1995 तक सभी बच्चों को 14 वर्ष को उम्र तक स्वतंत्र अनिवार्य शिक्षा का लाभ दे दिया जाएगा।

माध्यमिक शिक्षा

5.13 माध्यमिक शिक्षा छात्रों की विज्ञान, मानविकी और सामाजिक विज्ञानों की भिन्न-भिन्न भूमिकाओं से अवगत करना शुरू करती है। इस स्तर पर आते-आते छात्रों में इतिहास और राष्ट्रीय परिदृश्य की भावना भरी जा सकती है तथा उन्हें अपने संवैधानिक दायित्वों एवं नागरिक अधिकारों को समझने का अवसर दिया जा सकता है काम के स्वस्थ आचार को पूर्ण संचेतना के साथ आत्मसात करना तथा उदार एवं मिश्रित संस्कृति के मूल्यों को अपनाना अभीष्ट लक्ष्य होता है। इस लक्ष्य की पूर्ति होगी एक उपयुक्त रूप से तैयार किये गये पाठ्यक्रम के द्वारा।

सभी जानते हैं कि हमें आर्थिक विकास के लिए मूल्यवान मानव संसाधन चाहिये और यह संसाधन दो तरीके से प्राप्त किया जा सकता है। विशेष संस्थाओं के माध्यम से नियोजित व्यवसायीकरण द्वारा या माध्यमिक शिक्षा के पुनर्रचाव द्वारा। इन दिनों जहाँ माध्यमिक शिक्षा की सुविधा नहीं है वहाँ इसकी उपलब्धि एवं प्रवेश की व्यापक सुविधा दी जाएगी तथा अन्य क्षेत्रों में माध्यमिक शिक्षा के दृढ़ीकरण पर बल दिया जाएगा।

आदर्श विद्यालय

5.14. यह एक सर्वमान्य बात है कि मेधावी, प्रतिभासंपन्न एवं विशेष रुचियों वाले छात्रों को तीव्र गति से आगे बढ़ने के अवसर दिये जाने चाहिये। उनकी आर्थिक स्थिति और क्षमता चाहे कैसी ही क्यों न हो, स्तरीय शिक्षा का लाभ उन्हें अवश्य ही मिलना चाहिए।

5.15. इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए देश के विभिन्न क्षेत्रों में एक निश्चित रूपरेखा के आधार पर आदर्श विद्यालय स्थापित किये जायेंगे। मार्ग प्रशस्त करने वाले इन विद्यालयों में नवाचार एवं प्रयोग के पूरे अवसर उपलब्ध होंगे। उनका मुख्य उद्देश्य तो श्रेष्ठता के लक्ष्य की पूर्ति ही होगा पर उसके साथ-साथ समानता एवं सामाजिक न्याय के बिन्दु भी जुड़े रहेंगे (अनुसूचित जातियों/जनजातियों के आरक्षण की व्यवस्था होगी।) ये विद्यालय देश के विभिन्न भागों के अधिकांशतः ग्रामीण प्रतिभासम्पन्न बच्चों को साथ रहने एवं पढ़ने, अपनी शक्तियों का विकास करने तथा राष्ट्रव्यापी विद्यालय-सुधार कार्यक्रम के प्रेरक तत्व बनने के अवसर देंगे। विद्यालय आवासीय होंगे और इनमें बच्चों से किसी भी प्रकार का खर्च नहीं लिया जाएगा।

व्यवसायीकरण

5.16. प्रस्तावित शैक्षिक पुनर्गठन में व्यावसायिक शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। व्यावसायिक शिक्षा के व्यवस्थित एवं सुनियोजित कार्यक्रम को कठोरता से लागू किया जाएगा। हमारे सामने तीन स्पष्ट लक्ष्य हैं – (i) व्यक्तियों की रोजगार क्षमता को बढ़ाना (ii) कुशल मानवशक्ति की माँग और पूर्ति के बीच असंतुलन को कम करना तथा (iii) उन लोगों के लिए एक विकल्प प्रदान करना जो बिना किसी रुचि और उद्देश्य के उच्च शिक्षा की ओर बढ़ते रहते हैं।

5.17. व्यावसायिक शिक्षा अपने आप में एक स्पष्ट धारा होगी – यह कई क्षेत्रों में निर्धारित धन्धों के लिए छात्रों को तैयार करेगी। सामान्यतः ये पाठ्यक्रम माध्यमिक शिक्षा के बाद में शुरू होंगे पर योजना को लचीला रखने के लिए यह भी सम्भव है कि व्यावसायिक पाठ्यक्रम आठवीं कक्षा के बाद ही शुरू कर दिये जावें। उधर औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थायें भी व्यापक व्यावसायिक पद्धति पर चलाई जायेंगी, जिससे दोनों धाराओं का आपसी एकीकरण एवं समन्वय सुस्पष्ट हो सके।

5.18. स्वास्थ्य शिक्षा और प्रशिक्षण को भी स्वास्थ्य योजनाओं एवं सेवाओं से इष्टतम रूप से घुल-मिल जाना चाहिये। इससे स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के माध्यम से मानवशक्ति की उपयुक्त श्रेणियों को समुचित शिक्षा और प्रशिक्षण का लाभ मिल सकेगा। प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर स्वास्थ्य शिक्षा का प्रयोजन पारिवारिक एवं सामुदायिक स्वास्थ्य के प्रति व्यक्ति की निष्ठा एवं प्रतिबद्धता को प्रदर्शित करना है। यह क्रम हमें +2 स्तर

पर स्वास्थ्य से सम्बद्ध व्यावसायिक पाठ्यक्रम की ओर ले जायेगा। इसी आधार पर कृषि, क्रय-विक्रय एवं सामाजिक सेवाओं के क्षेत्रों में भी व्यावसायिक पाठ्यक्रम लागू किये जायेंगे। व्यावसायिक शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी होगा कि स्वयं रोजगार के लिए लोगों में दृष्टि ज्ञान और कौशल का विकास हो सके।

5.19. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के निरूपण और संस्थाओं की स्थापना का दायित्व सरकार के साथ-साथ सार्वजनिक एवं निजी संगठनों के नियोक्ताओं का भी होगा। हाँ, महिलाओं, ग्रामीण एवं जनजाति छात्रों तथा समाज के सुविधाहीन वर्गों की जरूरतों पर सरकार स्वयं ध्यान देगी। वह उसका अपना दायित्व होगा। इसी प्रकार विकलांगों के लिए भी समुचित कार्यक्रमों की व्यवस्था की जायेगी।

5.20. व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के स्नातकों को उन्नति के कई अवसर मिलेंगे। सेवा में रहते हुए वे अपना वृत्यात्मक विकास तथा कार्य क्षेत्र में सुधार कर सकेंगे। इतना ही नहीं, समुचित सेतु-पाठ्यक्रमों के माध्यम से वे चाहें तो व्यावसायिक धारा से निकल कर सामान्य, तकनीकी अथवा वृत्यात्मक शिक्षा की धाराओं में भी आ सकेंगे। व्यावसायिक शिक्षा उनकी गत्यात्मकता में बाधक नहीं बनेगी।

5.21. अनौपचारिक, लचीले और आवश्यकता-आधारित व्यावसायिक पाठ्यक्रम कइयों के लिए लाभदायक होंगे। इनका लाभ नव साक्षरों, प्राथमिक शिक्षा प्राप्त युवकों, कामकाजी व्यक्तियों, बेरोजगारों तथा आंशिक रोजगार भोक्ताओं को भी मिल सकेगा। महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

5.22. उन युवकों के लिए विशेष पाठ्यक्रमों की व्यवस्था होगी जो सामान्य शैक्षिक कार्यक्रमों से स्नातक होकर व्यावसायिक धारा में आना चाहते हों।

5.23. ऐसी प्रस्तावना है कि उच्च माध्यमिक शिक्षा से सन् 1990 तक दस प्रतिशत और सन् 1995 तक 25 प्रतिशत छात्र व्यावसायिक धारा में आ जायें। ऐसे कदम उठाये जाएंगे जिनसे व्यावसायिक धारा से आए हुए व्यक्तियों में से पर्याप्त बहुमत को रोजगार मिल जाये अथवा वे स्वयं अपना रोजगार ढूंढ़ सकें। कार्यक्रमों की निरन्तर समीक्षा की जायेगी। साथ ही माध्यमिक स्तर पर वैविध्य को प्रोत्साहन देने हेतु सरकार अपनी रोजगार नीति की भी संवीक्षा करेगी।

उच्च शिक्षा

5.24. उच्च शिक्षा व्यक्तियों को मानवता के सामने आने वाले गंभीर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक प्रश्नों से साक्षात्कार करने का अवसर देती है। साथ ही कौशल एवं ज्ञान के प्रचार-प्रसार द्वारा राष्ट्रीय विकास में सहयोग भी देती है। यही कारण है कि हमारे अस्तित्व के लिए यह शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण घटक हैं। शैक्षिक ढाँचे में शीर्ष स्थान पर होने के कारण शिक्षा पद्धति के लिए अध्यापक देने का मुख्य दायित्व भी इसी का है। इसकी भूमिका स्वतः स्पष्ट है।

5.25. ज्ञान के अपूर्व विस्फोट के प्रसंग में उच्च शिक्षा को पहले से कहीं अधिक गतिशील बनना है और नितान्त नये क्षेत्रों में प्रवेश करने को तैयार रहना है।

5.26. आज भारत में लगभग 150 विश्वविद्यालय एवं 5000 महाविद्यालय हैं। इन संस्थाओं में सर्वांगीण सुधार के लिए प्रस्तावना है कि निकट भविष्य में इनके दृढ़ीकरण तथा इनमें सुविधाओं के विस्तार पर जोर दिया जाएगा।

5.27. इस पद्धति को अवमूल्यन एवं गिरावट से बचाने के लिए आवश्यक कदम उठाये जायेंगे।

5.28. विश्वविद्यालयों के साथ महाविद्यालयों की सम्बद्धता के मिश्रित अनुभव हुए हैं। जब तक सम्बद्धता के स्थान पर विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अधिक मुक्त तथा अधिक सृजनात्मक सामंजस्य न हो जाए, बड़ी तादाद में स्वायत्तशासी महाविद्यालयों को विकसित करने में सहयोग दिया जाएगा। इसी प्रकार विश्वविद्यालयों के अन्तर्गत चयनात्मक आधार पर स्वायत्तशासी विभागों के गठन को भी प्रोत्साहित किया जाएगा। स्वायत्तता और स्वतंत्रता तो होगी लेकिन जवाबदेही भी साथ-साथ चलेगी।

5.29. आज की विशेषज्ञता की माँग को पूरी करने के लिए, कार्यक्रमों और पाठ्यक्रमों की पुनर्रचना की जाएगी। विशेष जोर होगा भाषागत क्षमता पर। विषयों के पारस्परिक संयोजन के सम्बन्ध में लचीलेपन में वृद्धि की जाएगी।

5.30. राज्य स्तरीय योजना एवं समन्वय का काम उच्च शिक्षा परिषद् के माध्यम से होगा। विश्वविद्यालय आयोग एवं उच्च शिक्षा परिषदें मिलकर ऐसे समन्वयकारी उपाय काम में लेंगी, जिनसे शिक्षा के स्तरों पर तिगरानी रखी जा सके।

5.31. न्यूनतम सुविधाओं का प्रावधान किया जाएगा। प्रवेश क्षमतानुसार ही होंगे। शिक्षण विधियों के रूपान्तरण की दिशा में सर्वोच्च प्रयत्नों की व्यवस्था होगी। दृश्य-श्रव्य साधनों एवं इलैक्ट्रोनिक उपकरणों का प्रयोग होगा। विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास, पाठ्यक्रम एवं पाठ्य-सामग्री निर्माण, शोध एवं शिक्षक प्रशिक्षण अभिस्थापन पर बल दिया जाएगा। शिक्षकों का प्रशिक्षण सेवाकाल के प्रारम्भ में तो होगा ही; सेवारत प्रशिक्षण की भी व्यवस्था रहेगी। शिक्षकों की उपलब्धियों का मूल्यांकन व्यवस्थित ढंग से किया जाएगा। सभी रिक्तियां गुणात्मकता के आधार पर भरी जायेंगी।

5.32. विश्वविद्यालयों में शोध कार्य को अधिक सम्बल और समर्थन दिया जाएगा और उसकी उच्च गुणात्मकता को बनाये रखने के लिए आवश्यक कदम उठाये जाएंगे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थाओं के शोध कार्य में समन्वय के लिए उपयुक्त तंत्र की स्थापना की जाएगी। यह समन्वय सभी प्रकार के शोध कार्य पर लागू होना है पर विशेषतः विश्वविद्यालयों के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी शोध कार्य पर अवश्य लागू होगा। इस बात का प्रयत्न किया जाएगा कि विश्वविद्यालय पद्धति के अंतर्गत स्वायत्तशासी व्यवस्था वाले राष्ट्रीय शोध कर्म की सुविधाएं उपलब्ध की जायें।

5.33. जीवविज्ञान, मानविकी एवं समाज विज्ञान में शोध कार्य को उपयुक्त समर्थन दिया जाएगा। ज्ञान संश्लेषण की आवश्यकता की पूर्ति के लिए अन्तर-विषय एवं अन्तर-संकाय शोध को भी प्रोत्साहन दिया जाएगा। भारत के पुरातन ज्ञान

भण्डार का मंथन करने एवं उसे समसामयिक वास्तविकताओं से जोड़ने के प्रयास चालू रहेंगे। इन प्रयासों के अंतर्गत संस्कृत एवं अन्य शास्त्रीय भाषाओं के व्यापक एवं घनीभूत अध्ययन की सुविधाओं का विकास किया जाएगा।

5.34. एक राष्ट्रीय संगठन की स्थापना की जाएगी जो नीति में संगति और सामंजस्य लाने, सुविधाओं की हिस्सेदारी करने तथा अन्तर-विषय शोध की व्यवस्था करने आदि के कार्य सम्पादित करेगा। इस संगठन के अंतर्गत सामान्य उच्च शिक्षा, कृषि, चिकित्सा, विधि, तकनीकी एवं वृत्यात्मक शिक्षा के क्षेत्र सम्मिलित रहेंगे।

खुला विश्वविद्यालय एवं दूरस्थ शिक्षा

5.35. उच्च शिक्षा में अवसरों की वृद्धि एवं शिक्षा में प्रजातंत्रीकरण के उपकरण के रूप में खुले विश्वविद्यालय की पद्धति का प्रचलन किया गया है।

5.36. इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सन् 1985 में गठित इन्दिरा गाँधी खुले विश्वविद्यालय को और मजबूत किया जाएगा।

5.37. इस शक्तिशाली तंत्र का विकास सावधानी से होगा तथा विस्तार और अधिक सतर्कता से किया जायेगा।

रोजगार की डिग्रियों से मुक्ति

5.38. चयनित क्षेत्रों में रोजगार की डिग्रियों से मुक्ति की शुरूआत की जायेगी।

5.39. इस प्रस्ताव की विशिष्ट पाठ्यक्रम क्षेत्रों में लागू नहीं किया जा सकता; जैसे – अभियांत्रिकी, चिकित्सा, विधि एवं शिक्षण के क्षेत्र। इसी प्रकार मानविकी, समाज विज्ञान एवं विज्ञान क्षेत्रों की रोजगार स्थितियों में भी उच्च शिक्षा प्राप्त विशेषज्ञों की सेवाओं की जरूरत बनी रहेगी।

5.40 डिग्रियों से मुक्ति की व्यवस्था उन क्षेत्रों में लागू होगी जब विश्वविद्यालय की डिग्री की योग्यता आवश्यक न हो। इसकी क्रियान्विति हमें विशेष रोजगार कोर्स की पुनर्रचना की ओर अग्रसर करेगी। इससे उन अभ्यर्थियों को अधिक न्याय मिल सकेगा जो योग्य होते हुए भी केवल इसलिए नौकरी नहीं पा सकते क्योंकि नियोक्ता लोग उनके बजाय स्नातकों को अनावश्यक प्राथमिकता देते हैं।

5.41. डिग्रियों से मुक्ति की सहगामी प्रवृत्ति के रूप में राष्ट्रीय परख सेवा (नेशनल टैस्टिंग सर्विस) जैसी उपयुक्त प्रणाली का क्रमिक सूत्रपात किया जायेगा। यह विशिष्ट रोजगार क्षेत्रों में अभ्यर्थियों की उपयुक्तता निर्धारित करने के लिए स्वैच्छिक आधार पर परीक्षाएं आयोजित करेगी तथा पूरे राष्ट्र में तुलनात्मक क्षमता के मानक बनाने का मार्ग भी प्रशस्त करेगी।

ग्रामीण विश्वविद्यालय

5.42. शिक्षा के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी के क्रांतिकारी विचारों के आधार पर ग्रामीण विश्वविद्यालय की नयी पद्धति को दृढ़ किया जायेगा। आधारभूत स्तरों पर सूक्ष्म आयोजन एवं ग्रामीण क्षेत्रों के रूपान्तरण आदि के चुनौतीपूर्ण कार्य इसके द्वारा किये जायेंगे। गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा संस्थाओं और उनके कार्यक्रमों को पूरा समर्थन दिया जायेगा।

भाग 6

तकनीकी एवं व्यवस्था-शिक्षा

6.1. यद्यपि तकनीकी तथा व्यवस्था शिक्षा की दोनों धाराएं अलग-अलग काम करती हैं, पर उनके अभिन्न रिश्ते और समान-धर्म चिन्ताओं को ध्यान में रखते हुए इन्हें परस्पर सम्बद्ध समझा जाना चाहिए। इनके पुनर्गठन के बारे में विचार करते समय यह ध्यान में रखना होगा कि शताब्दी के परिवर्तन के समय देश में अपेक्षित परिदृश्य क्या होगा ? हमारे विचार-फलक में कई बातें आएंगी – विशेष करके हमें आर्थिक-सामाजिक परिवेश तथा उत्पादन एवं व्यवस्था में संभावित परिवर्तनों को ध्यान में रखना होगा। तेजी से होने वाला ज्ञान का विस्तार एवं विज्ञान तथा तकनीकी क्षेत्र की महान् उपलब्धियाँ भी विचार के बिन्दुओं के रूप में सामने आएंगी।

6.2. तकनीकी एवं व्यवस्था सम्बन्धी मानव शक्ति तथा प्रौद्योगिकी के सुधारों का उपयोग हमें कई क्षेत्रों में करना है। इनकी उपयोगिता सेवागत क्षेत्र के भीतरी ढाँचे से लेकर असंगठित ग्रामीण क्षेत्रों तक सब जगह हैं।

6.3. अभी हाल में ही तकनीकी मानवशक्ति सम्बन्धी सूचना पद्धति का गठन हुआ है। इस व्यवस्था की और अधिक विकसित एवं दृढ़ीभूत किया जायेगा ताकि मानवशक्ति के आकलन में सुधार हो सके।

6.4. सुगठित एवं नवोदित प्रौद्योगिकी का विकास करने के लिए निरन्तर शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी।

6.5. कम्प्यूटर शिक्षा के कार्यक्रम विद्यालय स्तर से ही व्यापक रूप से शुरू किये जायेंगे। सभी जानते हैं कि कम्प्यूटर महत्त्वपूर्ण एवं सर्वव्यापी उपकरण बन गये हैं, अतः वृत्यात्मक शिक्षा में कम्प्यूटर के प्रयोग एवं प्रशिक्षण की अल्पतम व्यवस्था अवश्य की जायेगी।

6.6. वर्त्तमान पद्धति अपने आप में यांत्रिक और कठोर है। तकनीकी एवं व्यवस्था शिक्षा में प्रवेश की कठोर आवश्यकताओं के कारण लोगों का एक बहुत बड़ा समूह इनके लाभों से वंचित रह जाता है। इस क्षति की पूर्ति के लिए दूरस्थ शिक्षा एवं संचार साधनों के माध्यम से शिक्षा के कार्यक्रम प्रस्तुत किये जायेंगे। पोलीटैक्निक सहित तकनीकी व्यवस्था शिक्षा को एक अनुमापक लचीले सिद्धान्त से चलाया जायेगा जिसमें कई स्तरों पर प्रवेश की सुविधा होगी। इसके साथ-साथ मार्गदर्शन एवं निर्देशन की एक मजबूत प्रणाली का भी विकास किया जायेगा।

6.7. छोटे, असामूहिक एवं दीन व्यवस्था वाले क्षेत्रों में व्यवस्था-शिक्षा की प्रासंगिकता को बढ़ाना है। व्यवस्था-शिक्षा का दायित्व है कि वह भारतीय अनुभव का अभिलेखन करे तथा ज्ञान एवं विशिष्ट शैक्षिक कार्यक्रमों की एक ऐसी शाखा विकसित करे जो इन क्षेत्रों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके।

6.8. सरकार महिलाओं, आर्थिक-सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों तथा शारीरिक विकलांगों के प्रति पूर्णरूपेण सजग है। इनके लिए उपयुक्त औपचारिक-अनौपचारिक तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी।

6.9. नयी शिक्षा नीति में व्यावसायिक शिक्षा पर जोर दिया गया है। इसके विस्तार के लिए इस शिक्षा में बहुत बड़ी संख्या में अध्यापकों एवं वृत्तिकारों की आवश्यकता होगी। इस माँग की पूर्ति के लिए शैक्षिक प्रौद्योगिकी एवं पाठ्यक्रम-निर्माण जैसे कार्यक्रमों को शुरू किया जायेगा।

6.10. विद्यार्थियों की व्यवसाय के रूप में स्वरोजगार अपनाने हेतु प्रोत्साहित किया जायेगा। इस प्रसंग में उन्हें डिग्री और डिप्लोमा स्तर तक अनुगामी एवं ऐच्छिक विषयों द्वारा स्वयं व्यवस्थापन का प्रशिक्षण दिया जायेगा।

6.11. पाठ्यक्रम को अद्यतन बनाना है; आज तक की प्रगति का समावेश करना है अतः अप्रचलित और लुप्तप्राय ज्ञान का व्यवस्थित नवीनीकरण होना जरूरी है। इसी प्रकार नयी प्रौद्योगिकी एवं नये ज्ञान-क्षेत्रों का विकास भी आवश्यक हो जाता है।

संस्थागत प्रतिबलन

6.12. कुछ संस्थाएं ऐसी हैं जिन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में कमजोर वर्गों को उत्पादक धंधों का प्रशिक्षण देना शुरू किया है। यह काम वे सामुदायिक पोलीटैक्निक पद्धति से करती हैं। इसकी गुणात्मकता और व्याप-कता को प्रभावी बनाने के लिए सामुदायिक पोलीटैक्निक पद्धति का उत्तरोत्तर विकास किया जायेगा।

नवाचार, शोध तथा विकास

6.13. उच्च तकनीकी संस्थान शैक्षिक प्रक्रियाओं के नवीनीकरण एवं नवाचारों के लिए शोध कार्य करते रहेंगे। इसका प्रमुख उद्देश्य शोध एवं विकास के लिए श्रेष्ठ मानव-शक्ति का निर्माण करना होगा। विकास के लिए शोध कार्य का पूरा ध्यान तीन बातों पर होगा :–(i) वर्तमान प्रौद्योगिकी में सुधार, (ii) नयी देशज प्रौद्योगिकी का विकास तथा (iii) उत्पादन एवं उत्पादन-क्षमता में वृद्धि। एक ऐसी पद्धति का विकास किया जायेगा जो प्रौद्योगिकी पर ध्यान रख सके तथा उसके बारे में पूर्वानुमान लगा सके।

6.14. संस्थाओं तथा उपभोक्ता पद्धतियों में विभिन्न स्तरों पर सहयोग, सामंजस्य एवं तंत्र के फैलाव के बिन्दुओं पर सम्बन्धों का विकास होना जरूरी हैं। इन सम्बन्धों को काम में लिया जायेगा। इन सभी बातों के लिए नवाचार, सुधार एवं रखरखाव पर समुचित रूप से बल दिया जायेगा।

सभी स्तरों पर कुशलता एवं प्रभावशीलता का विकास

6.15. तकनीकी एवं व्यवस्था-शिक्षा मंहगी है अतः उसके मूल्य-नियंत्रण तथा श्रेष्ठता के लिए निम्न कदम उठाये जायेंगे :–

(i) आधुनिकता के प्रचार एवं लुप्तप्राय चीजों को हटाने को उच्च प्राथमिकता दी जायेगी। आधुनिकता की क्रियात्मक कुशलता के विकास के लिए काम में लिया जायेगा, न कि प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में।

(ii) संस्थाओं को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जायेगा कि वे समुदाय एवं उद्योग की सेवा करने के लिए अपनी क्षमता भर संसाधनों का विकास करें।

(iii) उपयुक्त छात्रावासों की व्यवस्था (विशेषतः कन्याओं के लिए) की जायेगी। इसी प्रकार खेलकूद, सृजनात्मक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए सुविधाओं में बढ़ोतरी की जायेगी।

(iv) अध्यापकों की नियुक्ति के लिए अधिक प्रभावशाली पद्धति होगी; व्यवसाय में प्रगति के अवसर बढ़ाये जायेंगे तथा सेवा सम्बन्धी परामर्श एवं अन्य पूर्व आवश्यकताओं में सुधार किया जायेगा।

(v) अध्यापकों की भूमिका बहु आयामी होगी। उन्हें अध्यापन, शोध, अधिगम-संसाधन सामग्री के निर्माण, प्रस्तार, सेवा कार्य, तथा संस्था की व्यवस्था आदि कई दायित्वों का निर्वाह करना होगा। विभिन्न संकायों के सदस्यों के लिए सेवा में प्रवेश से पूर्व तथा सेवाकाल की अवधि में प्रशिक्षण को अनिवार्य कर दिया जाएगा। स्टाफ के विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को राज्य स्तर पर एकीकृत तथा क्षेत्रीय/राष्ट्रीय स्तरों पर समन्वित किया जाएगा।

(vi) तकनीकी व्यवस्था-शिक्षा के पाठ्यक्रम लक्ष्यबद्ध होंगे। उन्हें उद्योगों एवं उपभोक्ताओं की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। इन संस्थाओं तथा उद्योग क्षेत्र के बीच में सक्रिय अन्तर्सम्बन्धों का विकास किया जाएगा। ये अन्तर्सम्बन्ध कई स्तरों पर होंगे। इनमें कार्यक्रम-आयोजन, क्रियान्विति, शोध, परामर्श तथा पारस्परिक रुचियों के अन्य क्षेत्र सम्मिलित रहेंगे।

(vii) व्यक्तियों तथा संस्थाओं को अपने कार्यों में श्रेष्ठता दिखाने पर मान्यता मिलेगी तथा उन्हें पुरस्कृत किया जाएगा। इसी आधार पर निम्न स्तर की संस्थाओं के उदय पर रोक लगाई जाएगी। सभी संकायों की भागीदारी से श्रेष्ठता के वातावरण का निर्माण किया जाएगा।

(viii) चयनित संस्थाओं को विभिन्न अंशों में शैक्षिक, प्रशासनिक तथा क्रियात्मक स्वायत्तता दी जाएगी लेकिन उसके साथ ही जवाबदेही सम्बन्धी रक्षोपाय भी होंगे।

(ix) तकनीकी शिक्षा, उद्योग, शोध एवं विकास कर्म, ग्रामीण एवं सामुदायिक विकास योजना तथा शिक्षा के अन्य पूरक क्षेत्रों के बीच में व्यापक तालमेल के तंत्र का विकास किया जाएगा।

व्यवस्था-कार्य एवं परिवर्तन

6.16. व्यवस्था पद्धतियों में परिवर्तनों के संभावित उदय से इन्कार नहीं किया जा सकता। परिवर्तन होते हैं तो छात्रों को उनके साथ तालमेल बिठाना आवश्यक हो जाता है। एक ऐसे तंत्र की रचना की जायेगी जिससे परिवर्तन की प्रकृति और दिशा को समझा जा सके तथा व्यवस्था-परिवर्तनों के महत्त्वपूर्ण कौशलों का विकास किया जा सके।

6.17. इस कार्य की एकीकृत प्रकृति को देखते हुए मानव संसाधन निर्माण मंत्रालय अभियांत्रिकी, व्यावसायिक एवं व्यवस्था शिक्षा में संतुलन लाने तथा तकनीकी एवं उद्योगकर्मियों की शिक्षा का प्रबंध करने के दायित्व लेगा।

6.18. तकनीकी व्यवस्था-शिक्षा के समुन्नयन के लिए वृत्यात्मक समितियों को प्रोत्साहित किया जाएगा ताकि वे अपनी उचित भूमिका का निर्वाह कर सकें।

6.19. तकनीकी शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद् को वैधानिक अधिकारों से सम्पन्न किया जाएगा। यह परिषद् अपेक्षित आचारों तथा स्तरों के आयोजन, निर्माण तथा रखरखाव का कार्य तो करेगी ही; अन्य अनेक क्षेत्रों में क्रियाशील रहेगी; जैसे मान्यता देना, प्राथमिक क्षेत्रों के लिए धन की व्यवस्था करना, नियंत्रण एवं मूल्यांकन करना; प्रमाण-पत्रों की समतुल्यता का निर्धारण करना तथा तकनीकी-व्यवस्था-शिक्षा के

समन्वित एकीकृत विकास की रूपरेखा बनाना। उचित रूप से गठित मान्यता बोर्डों द्वारा अनिवार्य सावधिक मूल्यांकन की व्यवस्था की जाएगी।

6.20. ऊँचे स्तर बनाये रखने तथा अन्य अनेक तर्क संगत कारणों से यह जरूरी हो गया हैं कि तकनीकी एवं वृत्ति-शिक्षा के व्यवसायीकरण पर रोक लगा दी जाए। ऐसी रोक की व्यवस्था की जाएगी। हमारे सामाजिक लक्ष्यों तथा स्वीकृत आचार नियमों के अनुसरण में एक ऐसी वैकल्पिक पद्धति का विकास किया जाएगा जो निजी एवं स्वैच्छिक प्रयासों को समन्वित कर सके।

भाग 7

पद्धति की प्रभावी क्रियाशीलता की योजना

7.1. यह स्पष्ट है कि ये और शिक्षा से सम्बद्ध अनेक नए कार्य अव्यवस्था के वातावरण में नहीं चलाये जा सकते। शिक्षा की व्यवस्था के लिए अत्यधिक मानसिक अनुशासन, श्रम तथा उद्देश्य की गम्भीरता की आवश्यकता होती है। साथ ही नवाचार एवं सृजनात्मकता के लिए आवश्यक स्वतंत्रता भी होनी चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र एवं गुण-धर्म में दूरगामी परिवर्तन करने ही होंगे और इसके लिए पूरी प्रणाली में अनुशासन की प्रक्रिया की शुरूआत भी अवश्यंभावी होगी। जो कुछ भी बचा है, उसमें अनुशासन की शुरूआत होगी – अभी, आज और यहीं पर।

7.2. देश ने शिक्षा प्रणाली में अगाध विश्वास व्यक्त किया है। लोगों की अधिकार है कि वे हमसे मूर्त परिणामों की अपेक्षा कर। पहला काम यही है कि इसे चलने लायक बनाया जाए। सभी अध्यापकों को पढ़ाना चाहिए – सभी छात्रों को अध्ययन करना चाहिए।

7.3. इस सम्बन्ध में जो कार्य-नीति होगी उसके घटक निम्नानुसार हैं :–

(अ) अध्यापकों को उत्तम सुविधाएं मिलें पर अधिक जवाबदेही का सिद्धान्त भी लागू किया जाए।

(आ) छात्रों के लिए सुधरी हुई अध्ययन सुविधाओं की व्यवस्था, पर साथ ही साथ स्वीकृत व्यवहार एवं आचार-संहिता के परिपालन पर जोर हो।

(इ) संस्थाओं को उत्तम सुविधाओं का प्रावधान हो।

(ई) राष्ट्रीय अथवा राज्य स्तरों पर निर्धारित स्तरों एवं आचारों के आधार पर एक ऐसी पद्धति का विकास हो जो संस्थाओं की उपलब्धियों की समीक्षा कर सके।

भाग 8

शिक्षा की प्रक्रिया और विषयवस्तु का पुनर्रचना

सांस्कृतिक परिदृश्य

8.1. शिक्षा की वर्तमान प्रणाली और देश की विपुल, सम्पन्न एवं विविध सांस्कृतिक परम्पराओं के बीच में जो विच्छेद है उसे एक सेतु की आवश्यकता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी में व्यस्तता का यह आशय कदापि नहीं है कि नयी पीढ़ी को भारतीय इतिहास एवं संस्कृति की जड़ों से विच्छिन्न किया जाये। चाहे कुछ भी हो, हमें किसी भी कीमत पर संस्कृति-हीनता, अमानवीयता अथवा (परम्पराओं से) विलगाव आदि को रोकना है। शिक्षा ही वह तत्व है जो दोनों धाराओं के बीच में एक सुन्दर सम्न्वय ला सकती है। ये दो धाराएं परिवर्तनोन्मुखी प्रौद्योगिकी तथा सांस्कृतिक परम्पराओं की हैं।

8.2. सांस्कृतिक विषयवस्तु शिक्षा के पाठ्यक्रमों तथा प्रक्रियाओं दोनों को सम्पन्न करेगी तथा इसे कई रूपों में परिलक्षित किया जा सकेगा। बच्चे सौंदर्य, सामंजस्य एवं परिष्कार के प्रति संवेदनशील बनेंगे। सांस्कृतिक समुन्नयन के लक्ष्य की पूर्ति के लिए समुदाय के संदर्भ व्यक्तियों को आमंत्रित किया जायेगा। अपने-अपने क्षेत्रों में निष्णात इन व्यक्तियों की औपचारिक शैक्षिक योग्यताओं पर ध्यान नहीं दिया जायेगा। सम्प्रेषण की मौखिक एवं लिखित दोनों प्रकार की परम्पराओं का उपयोग होगा। पुराने उस्तादों की भूमिकाओं की समर्थन एवं मान्यता मिलेगी जो पारस्परिक विधियों से सांस्कृतिक परंपराओं का रक्षण एवं वर्द्धन करते आये हैं।

8.3. विश्वविद्यालय शिक्षा प्रणाली का कला, पुरातत्व एवं प्राच्य अध्ययन की उच्च शिक्षण शालाओं से गहरा तालमेल होगा। ललितकलाओं, संग्रह शास्त्र एव लोक साहित्य के विशिष्ट क्षेत्रों पर समुचित ध्यान दिया जायेगा। हमें इन क्षेत्रों में विशिष्ट मानव शक्ति की आवश्यकता है – उसकी पूर्ति के लिए शिक्षण, प्रशिक्षण एवं शोध की सुदृढ़ व्यवस्था की जायेगी।

मूल्य शिक्षा

8.4. अनिवार्य मूल्यों का क्षरण एवं दोषदर्शिता का भाव हमारे लिए निरंतर बढ़ती हुई चिन्ता का कारण है। ऐसी स्थिति में पाठ्यक्रम का पुनर्गठन आवश्यक हो गया है ताकि शिक्षा का उपयोग सामाजिक, एवं आचार मूल्यों के विकास में एक सशक्त उपकरण के रूप में किया जा सके।

8.5. हमारे सांस्कृतिक बहुल समाज में शिक्षा को सार्वभौमिक, शाश्वत मूल्यों का विकास करना चाहिए, जो देशवासियों की एकता तथा समन्वय के लिए अभिविन्यस्त हो। यह मूल्य शिक्षा पाँच चीजों को निर्मूल करने में सहायक होनी चाहिए। ये पांच बातें है :–रूढ़ीवाद, धर्मान्धता, हिंसा, अंधविश्वास एवं भाग्यवाद।

8.6. निषेध की इस भूमिका के अतिरिक्त मूल्य शिक्षा का एक गहन सकारात्मक विषय क्षेत्र भी है। यह विषय क्षेत्र हमारी परम्पराओं, राष्ट्रीय लक्ष्यों तथा सार्वभौमिक ज्ञानबोध पर आधारित है। मूल्य शिक्षा का प्राथमिक जोर इसी लक्ष्य की पूर्ति पर होना चाहिए।

भाषाएँ

8.7. सन् 1968 की शिक्षा नीति ने भाषाओं के विकास के प्रश्न की विस्तारपूर्वक जाँच की थी। इसके आवश्यक प्रावधानों में मुश्किल से ही कोई सुधार किया जा सकता है। सच पूछें तो वे आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने पहले कभी थे। हाँ, जहाँ तक क्रियान्विति का प्रश्न है; 1968 की नीति का क्रियान्वयन एक समान नहीं रहा। अब उसको और अधिक शक्ति, चेतना एवं उद्देश्यबद्धता के साथ लाग किया जाएगा।

पुस्तकें एवं पुस्तकालय

8.8. जनशिक्षा के लिए कम कीमत पर पुस्तकों की उपलब्धि अपरिहार्य है। इस बात के प्रयास किये जायेंगे कि जनसंख्या के सभी वर्गों की पुस्तकों तक पहुँच सहज रूप से हो सके। पुस्तकों की गुणवत्ता को सुधारने, लोगों की अध्ययन आदतों का विकास करने तथा सृजनात्मक लेखन को प्रोत्साहित करने के उपाय किये जायेंगे। लेखकों के अधिकारों की रक्षा की जाएगी। विदेशी पुस्तकों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद को सम्बल दिया जाएगा तथा बच्चों के लिए स्तरीय पुस्तकों,

पाठ्यपुस्तकों एवं कार्यपुस्तकों के उत्पादन पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

8.9. किताबों का तो विकास करना ही है पर इसके साथ-साथ वर्त्तमान पुस्तकालयों के सुधार एवं नये पुस्तकालयों की स्थापना का एक राष्ट्रव्यापी अभियान चलाया जायगा। सभी विद्यालयों में पुस्तकालय-सुविधा की व्यवस्था की जाएगी तथा पुस्तकाल्याधक्षों की पद-प्रतिष्ठा में सुधार किया जयगा।

संचार तंत्र एवं शैक्षिक प्रौद्योगिकी

8.10. शताब्दी की शुरूआत में विकास की प्रक्रिया के सामने कई क्रम, अनुक्रम और स्तर आते चले गये। यह क्रमिक विकास की प्रक्रिया थी जो एक सिलसिलेवार तरीके से चलती थी। आज की प्रौद्योगिकी में वह क्षमता है कि वह इन अनेकों क्रमों को लांघ कर आगे निकल सके। उसके आगे समय एवं दूरी के अवरोध अपने आप व्यवस्थित हो जाते हैं। अपने संगठनात्मक द्वैत को मिटाने के लिए आज की शैक्षिक प्रौद्योगिकी को एक साथ दो स्तरों पर क्रियाशील होना चाहिए। इसकी पहुँच दूरस्थ क्षेत्रों और समाज के वंचित वर्गों तक उसी प्रकार होनी चाहिए जैसी अपेक्षाकृत सम्पन्न तथा आसानी से सुलभ क्षेत्रों में होती है।

8.11. शैक्षिक प्रौद्योगिकी को औपचारिक क्षेत्रों में कई महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं। उपयोगी सूचना का प्रसार हो या अध्यापकों के शिक्षण-प्रशिक्षण की व्यवस्था; कला-संस्कृति की चेतना का विकास हो या स्थायी मूल्यों का संक्रमण, प्रौद्योगिकी का उपयोग तो किया ही जाएगा। उपलब्ध ढाँचे का अधिकतम लाभ लेने का प्रयास होगा। गांवों तक कार्यक्रम को पहुंचाना है। जहाँ बिजली नहीं होगी, बैटरी से या सौर शक्ति से कार्यक्रम चलाये जायेंगे।

8.12. संस्कृति-संगत एवं प्रासंगिक कार्यक्रम का निर्माण शैक्षिक प्रौद्योगिकी का एक महत्त्वपूर्ण घटक बनेगा। राष्ट्र के सारे उपलब्ध संसाधन इस कार्य के लिए प्रयुक्त किये जायेंगे।

8.13. संचार माध्यमों का बच्चों और प्रौढ़ों के मानस पर जबरदस्त प्रभाव होता है। कुछ माध्यम उपभोक्तावाद एवं हिंसा को बढ़ावा देते हैं और इस प्रकार हानिकारक प्रभाव छोड़ते हैं। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के ऐसे कार्यक्रमों पर रोक लगा दी जाएगी जो शैक्षिक लक्ष्यों की पूर्ति में प्रतिकूल सिद्ध होते हैं। फिल्मों एवं अन्य संचार माध्यमों में भी ऐसी प्रवृत्तियों को रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाये जायेंगे। उच्च गुणवत्ता और उपयोगिता की बाल फिल्मों के निर्माण का एक सक्रिय अभियान छेड़ा जाएगा।

कार्यानुभव

8.14. कार्यानुभव शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण घटक है तथा उसे यह मान्यता शिक्षा के सभी स्तरों पर मिली हुई है। इस सोद्देश्य अर्थपूर्ण शारीरिक कर्म को शैक्षिक प्रक्रिया के अंग के रूप में संगठित किया जाता है। इसका परिणाम सेवा के रूप में भी होता हैं और पदार्थों के रूप में भी तथा दोनों ही

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968 से उद्धृत

भाषा-नीति

(3) **भाषाओं का विकास : (क) प्रादेशिक भाषाएं**–भारतीय भाषाओं और साहित्य का उत्साह के साथ विकास करना शैक्षिक तथा सांस्कृतिक विकास की एक अनिवार्य शर्त है। जब तक यह नहीं किया जाएगा, लोगों की सृजनात्मक शक्तियां क्रियाशील नहीं होंगी, शिक्षा के स्तरों में सुधार नहीं आएगा, जनसाधारण तक ज्ञान नहीं पहुँचेगा, और बुद्धिजीवियों तथा जनसाधारण के बीच की खाई यदि चौड़ी न भी हुई तो यथावत् बनी रहेगी। प्राथमिक और माध्यमिक अवस्थाओं में प्रादेशिक भाषाओं को पहले से ही शिक्षा के माध्यम के रूप में व्यवहृत किया जा रहा है। अब उनका प्रयोग विश्वविद्यालय अवस्था में भी करने के लिए तेजी से कदम उठाए जाने चाहिए।

(ख) त्रिभाषा सूत्र–माध्यमिक अवस्था में राज्य सरकारों को त्रिभाषा सूत्र लागू करना और जोर-शोर के साथ उसको क्रियान्वित करना चाहिये। इस सूत्र के अन्तर्गत एक आधुनिक भारतीय भाषा तरजीहन् एक दक्षिण भारतीय भाषा का अध्ययन तथा साथ ही हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी और अंग्रेजी और अहिन्दी भाषी राज्यों में प्रादेशिक भाषा तथा अंग्रेजी के साथ हिन्दी का अध्ययन शामिल है। विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में हिन्दी तथा/या अंग्रेजी के उपयुक्त पाठ्यक्रमों की सुविधा भी होनी चाहिये ताकि छात्र विहित विश्वविद्यालय मानकों के अनुरूप इन भाषाओं में प्रवीणता प्राप्त कर सकें।

(ग) हिन्दी–हिन्दी के विकास और प्रसार का हर सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिये। सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी का विकास करते समय इस बात का समुचित ध्यान रखना चाहिये कि यह भाषा संविधान के अनुच्छेद 351 के उपबन्धों के अनुसार भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्त्वों के लिए अभिव्यक्ति का माध्यम बन सकेगी। अहिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी के माध्यम से शिक्षा देने वाले कॉलेजों तथा उच्चतर शिक्षा की अन्य संस्थाओं को स्थापित करने के प्रयत्नों को प्रोत्साहन देना चाहिये।

(घ) संस्कृत–भारतीय भाषाओं के विकास में संस्कृत के विशेष महत्त्व को देखते हुए और देश की सांस्कृतिक एकता के लिये उसके अपूर्व योगदान की दृष्टि से स्कूल तथा विश्वविद्यालय स्तर पर संस्कृत के अध्यापन की सुविधायें अधिक विस्तृत पैमाने पर दी जानी चाहिए। इस भाषा के अध्यापन के नए तरीकों के विकास को प्रोत्साहन देना चाहिए और प्रथम और द्वितीय डिग्री अवस्थाओं पर, उन पाठ्यक्रमों में जहाँ कि इस भाषा का ज्ञान उपयोगी है (जैसे, आधुनिक भारतीय भाषाएं प्राचीन भारतीय इतिहास, भारत विद्या तथा भारतीय दर्शन) संस्कृत के अध्यापन की सम्भावनाओं की खोज की जानी चाहिये।

(ङ) अन्तर्राष्ट्रीय भाषाएं–अंग्रेजी तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं के अध्ययन पर विशेष बल दिया जाना चाहिये। संसार में ज्ञान का प्रसार बड़ी तेजी से हो रहा है, विशेषकर विज्ञान और शिल्पविज्ञान के क्षेत्र में। भारत को न केवल इस विकास को बनाए रखना हैं बल्कि अपनी ओर से भी उसमें सार्थक योगदान करना है। इस उद्देश्य से अंग्रेजी के अध्ययन की विशेष रूप से पुष्ट करना चाहिये।

समाज के लिए उपयोगी हैं। कार्यानुभव की शिक्षा सुसंगठित एवं क्रमबद्ध कार्यक्रम के माध्यम से देने का लक्ष्य है। इसमें ऐसी गतिविधियाँ होंगी जो छात्रों की रुचियों, योग्यताओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप हो और जो उनके कौशल की सीमाओं तथा विभिन्न स्तरों पर बढ़ते हुए ज्ञान से मेल खाती हों।

यह अनुभव कार्यशक्ति के क्षेत्र में छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। निम्न माध्यमिक स्तर पर लिया गया पूर्व-व्यावसायिक कार्यक्रम भी उपयोगी है क्योंकि यह उच्च माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक विषयों के चयन में सहायक रहेगा।

शिक्षा एवं पर्यावरण

8.15. पर्यावरण की चेतना सर्वोच्च आवश्यकता की बात है तथा इसे उत्पन्न किया जाना चाहिए। शैशव से लेकर आयु के सभी स्तरों तथा समाज के सभी वर्गों में इसे व्याप्त होना है। विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के शिक्षण में पर्यावरण चेतना का विकास जरूरी हैं। शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया में इस बिन्दु (पर्यावरण चेतना) को एकीकृत कर लिया जायेगा।

गणित-शिक्षण

8.16. गणित को एक ऐसे ज्ञान तत्व के रूप में देखा जाना चाहिए जो बच्चे की सोचने, युक्तियुक्त बात कहने, संश्लेषण करने तथा तार्किक स्पष्टता प्रदर्शित करने का प्रशिक्षण देता हो। एक विशिष्ट विषय होने के अतिरिक्त यह उस प्रत्येक विषय का सहगामी है जो संश्लेषण तथा तार्किकता लिये हुए हो।

8.17. शिक्षा में कम्प्यूटर के नव प्रवेश; शैक्षिक संगणक प्रणाली के प्रचलन; कारण-परिणाम सम्बन्धों की समझ के माध्यम से सीखने की क्रिया के विकास तथा विकल्पों के पारस्परिक प्रभाव के कारण, गणित के शिक्षण की समुचित रूप से पुनर्गठित किया जायेगा। इससे यह शिक्षण आधुनिक प्रौद्योगिकी विधियों के अनुरूप बन सकेगा।

विज्ञान-शिक्षा

8.18. बच्चे में जिज्ञासा, सर्जना एवं वस्तुनिष्ठता की भावना भरने, प्रश्न पूछने के साहस का संचार करने तथा सौन्दर्य-बोध की संवेदना जगाने के लिए विज्ञान-शिक्षा को सुदृढ़ किया जायेगा। विज्ञान-शिक्षा इन सुप्रभाषित योग्यताओं एवं मूल्यों का विकास करेगी।

8.19. विज्ञान शिक्षा के कार्यक्रम इस तरह बनाये जायेंगे जिनसे वे अध्येताओं में समस्या समाधान तथा निर्णय करने की क्षमता विकसित करा सकें। साथ ही वे विज्ञान का स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग एवं जीवन के अन्य पक्षों से अंतर्सम्बन्ध खोज सकें। औपचारिक शिक्षा के घेरे से बाहर रहने वाले असंख्य लोगों तक विज्ञान-शिक्षा को पहुँचाने का हर संभव प्रयास किया जायेगा।

क्रीड़ा एवं शारीरिक शिक्षा

8.20. क्रीड़ा एवं शारीरिक शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का अन्तर्भूत अंग है। इसे उपलब्धियों के मूल्यांकन में सम्मिलित किया जायेगा। शिक्षा के प्रासाद के अंतर्गत शारीरिक शिक्षा, क्रीड़ा एवं खेलकूद का एक राष्ट्रव्यापी ढाँचा खड़ा किया जायेगा।

8.21. उसे विद्यालय-सुधार कार्यक्रम के एक भाग के रूप में विकसित किया जायेगा। इसमें क्रीड़ांगण, उपकरण, खेलकूद शिक्षक एवं निर्देशक आदि सभी का समावेश होगा। शहरों में उपलब्ध खुले स्थलों को खेल के मैदानों के लिए सुरक्षित किया जायेगा। यदि आवश्यक हुआ तो इसके लिए विधायी उपायों का सहारा लिया जायेगा। क्रीड़ा विद्यालयों की स्थापना के प्रयास किये जायेंगे। इन विद्यालयों में सामान्य शिक्षा के साथ-साथ क्रीड़ा एवं क्रीड़ा सम्बन्धी गतिविधियों पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। खेलकूद में प्रतिभासम्पन्न छात्रों को समुचित प्रोत्साहन मिलेगा। देशज पारम्परिक खेलों पर उचित जोर दिया जायेगा। इसी प्रकार शारीरिक-मानसिक विकास की पद्धति के रूप में योग शिक्षा पर विशेष ध्यान रहेगा तथा इस पद्धति को सभी विद्यालयों में लागू करने तथा शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सम्मिलित करने के प्रयास किये जायेंगे।

युवकों की भूमिका

8.22. युवकों को शिक्षण संस्थाओं एवं उनसे बाहर ऐसे अनेक अवसर दिये जायेंगे जिनसे वे राष्ट्रीय एवं सामाजिक निर्माण में अपने आपको सम्मिलित कर सकें। वर्त्तमान में एन.सी.सी. एवं एन.एस.एस. जैसी कई योजनाएं प्रचलित हैं। विद्यार्थियों को इन योजनाओं में भाग लेना होगा। संस्थाओं के बाहर के युवकों को विकास, सुधार एवं प्रसार के कार्यक्रम अपनाने को प्रोत्साहित किया जायेगा। राष्ट्र-सेवा स्वयंसेवी योजना (नेशनल सर्विस वोलेन्टियर स्कीम) को सुदृढ़ किया जायेगा।

मूल्यांकन प्रक्रिया एवं परीक्षा-सुधार

8.23. उपलब्धि का मूल्यांकन किसी भी शिक्षण-अधिगम पद्धति का एक अभिन्न अंग है। एक दृढ़ शैक्षिक कार्यनीति के हिस्से के रूप में परीक्षा की अपनी भूमिका है। इसका उपयोग शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने में किया जाना चाहिये।

8.24. हमारा लक्ष्य परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन लाने का है। इस परिवर्तन से मूल्यांकन की एक मान्य, प्रामाणिक एवं विश्वस्त विधि सामने आएगी जो छात्रों के विकास का तो आकलन करेगी ही; शिक्षण-अधिगम विधियों के सुधार का एक शक्तिशाली उपकरण भी बनेगी। क्रियात्मक रूप से इसका तात्पर्य निम्न बातों से होगा :

(i) अत्यधिक संयोग एवं व्यक्तिपरकता के बिन्दु का विलोप।

(ii) रटने अथवा कंठस्थ करने के महत्त्व में कमी।

(iii) शिक्षा की पूरी अवधि में की गई शैक्षिक एवं शिक्षेतर बातों का निरन्तर व्यापक मूल्यांकन।

(iv) अध्यापकों, छात्रों एवं अभिभावकों द्वारा मूल्यांकन प्रक्रिया का प्रभावी उपयोग।

(v) परीक्षा संचालन में सुधार।

(vi) शैक्षिक सामग्रियों एवं विधियों में सहवर्ती परिवर्तनों की शुरूआत।

(vii) माध्यमिक स्तर से क्रमिक रूप में सेमेस्टर प्रणाली का प्रचलन, तथा

(viii) अंकों के स्थान पर श्रेणियों का उपयोग।

8.25 उपरोक्त लक्ष्य शिक्षण संस्थाओं में चलने वाली बाह्य एवं आंतरिक दोनों प्रकार की परीक्षाओं के लिये प्रासंगिक हैं। बाह्य परीक्षाओं के प्राधान्य को कम किया जाएगा, संस्था के स्तर पर कारगर मूल्यांकन पर बल दिया जाएगा।

भाग 9

शिक्षक

9.1. शिक्षक की प्रतिष्ठा और उसकी स्थिति किसी भी समाज के सामाजिक-सांस्कृ-

तिक आचार को परिलक्षित करती है। कहा जाता है कि शिक्षक के स्तर से ऊपर कोई भी व्यक्ति नहीं पहुँच सकता। सरकार और समाज को ऐसी स्थितियाँ बनानी चाहिये जो शिक्षक को रचनात्मक एवं सृजनात्मक धरातल पर काम करने को प्रोत्साहित कर सके। शिक्षक को नवाचार करने तथा संप्रेषण एवं क्रियाओं की उपयुक्त विधियाँ खोजने की स्वातन्त्रता होनी चाहिए जो समाज की आवश्यकताओं, क्षमताओं और चिन्ताओं के लिए प्रासंगिक हो।

9.2. अध्यापकों की नियुक्तियों के तरीकों को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाएगा जिससे गुणवत्ता, वस्तुनिष्ठता और स्थानिक एवं क्रियात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। उनके वेतनमान तथा सेवा शर्तों में भी परिवर्तन वांछनीय है। यह परिवर्तन शिक्षकों की सामाजिक एवं वृत्यात्मक जिम्मेदारियों के अनुरूप होना चाहिये। अध्यापन के क्षेत्र में हमें प्रतिभाओं को आकर्षित जो करना है। हमारे सामने कुछ वांछित लक्ष्य हैं जैसे शिक्षकों के वेतनमान में समानता, सेवा शर्तों में सुधार और शिकायतों को दूर करने के लिए राष्ट्रव्यापी तंत्र की स्थापना। इन लक्ष्यों तक पहुँचने के प्रयास किये जाएंगे। उनकी नियुक्तियों एवं स्थानान्तरणों में वस्तुनिष्ठता बनाये रखने के लिए दिशा-निर्देश तैयार किये जाएंगे। अध्यापकों के कार्य का मूल्यांकन करने के लिए जिस विधि का विकास किया जाएगा, उससे खुलापन होगा; वह तथ्य आधारित होगी और उसमें साझेदारी की गुंजाइश होगी। ऊँचे वेतनमानों में पदोन्नतियों के तर्कसंगत अवसर दिये जाएंगे। जबाबदेही के आचार निर्मित किये जाएंगे – अच्छे कार्य करने पर प्रोत्साहन तथा काम न करने पर दण्ड विधान की व्यवस्था होगी। शैक्षिक कार्यक्रमों के निर्माण तथा उनकी क्रियान्विति में अध्यापकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहेगी।

9.3. शिक्षक संगठनों की भी एक महती भूमिका है–उन्हें चाहिये कि वे अपनी व्यावसायिक सत्यनिष्ठा की रक्षा करें तथा अध्यापकों की प्रतिष्ठा को बढ़ायें। वृत्यात्मक बुरे आचारों को रोकने में भी उनको सहायक होना चाहिये। राष्ट्रीय शिक्षक संगठन अध्यापकों के लिये एक आचार संहिता का निर्माण करेंगे तथा उसके अनुपालन की व्यवस्था करेंगे।

शिक्षकों की शिक्षा

9.4. शिक्षक-प्रशिक्षण भी एक निरन्तर प्रक्रिया है। सेवा-पूर्व एवं सेवारत प्रशिक्षण एक दूसरे से अभिन्न है, पूरक हैं एक दूसरे के वे। हमारा पहला कदम शिक्षक-प्रशिक्षण की पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन करने का होगा।

9.5. शिक्षक-प्रशिक्षण के कार्यक्रम निरन्तर शिक्षा की उपादेयता पर जोर देंगे। वे शिक्षकों के लिए इस आवश्यकता को भी प्रतिपादित करेंगे कि उन्हें नयी शिक्षा नीति के दिशामूलक बिन्दुओं की क्रियान्विति करनी है।

9.6. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों तथा औपचारिक एवं अनौपचारिक केन्द्रों के कार्यकर्ताओं के लिए जिलास्तरीय शिक्षा एवं प्रशिक्षण परिषदों की स्थापना की जायेगी। ये संस्थाएं सेवापूर्व तथा सेवावधि में प्रशिक्षणों की व्यवस्था करेंगी। उक्त संस्थाओं के गठन के साथ-साथ निम्नस्तरीय संस्थाएं समाप्त कर दी जाएगी। माध्यमिक शिक्षकों को प्रशिक्षण देने वाले कुछ चयनित महाविद्यालयों को क्रमोन्नत कर दिया जाए ताकि वे राज्य शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों के कार्य के अनुपूरक बन सकें। शिक्षक-प्रशिक्षण की राष्ट्रीय परिषद् की समुचित संसाधन आवंटित किये जाएंगे। परिषद् शिक्षक-प्रशिक्षण विद्यालयों को मान्यता देने तथा पाठ्यक्रम निर्माण एवं विधियों के निरूपण में मार्गदर्शन देने के लिए अधिकृत होगी। शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों के विभागों के बीच में परस्पर आदान-प्रदान एवं गहन तालमेल की व्यवस्था का विकास किया जाएगा।

भाग 10

शिक्षा की व्यवस्था

10.1. शिक्षा के आयोजन एवं उसकी व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन करना है। इस परिवर्तन को उच्चतम प्राथमिकता दी जाएगी। दिशा मूलक विचारणीय बिन्दु इस प्रकार होंगे :—

(अ) शिक्षा की योजना एवं व्यवस्था के परिदृश्य की एक दीर्घावधि योजना बनाना। इसका देश की विकास-प्रक्रिया एवं मानवशक्ति की आवश्यकता से एकीकरण करना।

(आ) विकेन्द्रीकरण करना तथा शैक्षिक संस्थाओं में स्वायत्तता की भावना सृजित करना।

(स) लोगों की भागीदारी पर अत्यधिक जोर देना। इस भागीदारी में संगठन, गैर सरकारी संस्थान तथा स्वैच्छिक प्रयास सभी सम्मिलित रहेंगे।

(द) शिक्षा की योजना एवं व्यवस्था प्रक्रियाओं में अधिक संख्या में महिलाओं को सम्मिलित करना।

(ई) घोषित उद्देश्यों एवं आचारों के संदर्भ में जवाबदेही के सिद्धान्त को लागू करना।

राष्ट्रीय स्तर पर

10.2. शिक्षा की केन्द्रीय परामर्श परिषद् (CABE) की तीन प्रमुख एवं मार्गदर्शी भूमिकाएं होंगी :– (i) शिक्षा के विकास की संवीक्षा करना, (ii) पद्धति को सुधारने के लिए वांछित परिवर्तनों का निर्धारण करना तथा (iii) क्रियान्विति का निर्देशन करना। परिषद् अपना काम समुचित समितियों एवं अन्य तंत्रों के माध्यम से करेगी ताकि मानव संसाधन विकास के विभिन्न क्षेत्रों के साथ सम्पर्क एवं समन्वय रखा जा सके। केन्द्र एवं राज्यों के शिक्षा विभागों को वृत्तिकारों के सक्रिय प्रतिभागीत्व से सुदृढ़ बनाया जाएगा।

भारतीय शिक्षा सेवा

10.3. शिक्षा में व्यवस्था के ढाँचे के अंतर्गत अखिल भारतीय स्तर पर "भारतीय शिक्षा सेवा" की स्थापना की जाएगी। इससे शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र को एक राष्ट्रीय स्वरूप मिल सकेगा। इस सेवा के मूलभूत सिद्धान्तों कार्यों एवं नियुक्ति पद्धतियों आदि का निर्धारण राज्य सरकारों के साथ परामर्श एवं सम्पर्क से होगा।

व्यवस्था : राज्य-स्तर पर

10.4. राज्य सरकारें केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार परिषद् की तरह अपने यहाँ भी राज्य शिक्षा सलाहकार परिषदों का गठन कर सकती हैं। मानव संसाधन विकास से जुड़े हुए विभिन्न विभागों में जो तंत्र कार्य कर रहे हैं, उनमें एकीकरण के लिए प्रभावी कदम उठाये जाने चाहिए।

10.5. शिक्षा के आयोजकों, प्रशासकों एवं संस्था प्रधानों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। इस कार्य के लिए

संस्थागत व्यवस्थाओं का क्रमिक विकास किया जाना चाहिए।

व्यवस्था : जिला एवं स्थानीय स्तर

10.6. उच्च माध्यमिक स्तर तक शिक्षा के नियंत्रण के लिए शिक्षा के जिला बोर्डों का गठन किया जायेगा। राज्य सरकारें इस बिन्दु की पूर्ति के लिए संभव अभियान चलायेगी। शैक्षिक विकास के बहु आयामी ढाँचे के अंतर्गत केन्द्र एवं राज्य सरकारें तथा जिला व स्थानीय संस्थाएँ चारों स्तरों पर तालमेल रखेंगी। ये स्तर है **'योजना, समन्वय, नियंत्रण तथा मूल्यांकन।**

10.7. किसी भी शैक्षिक संस्था के प्रधान को एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका दी जानी चाहिए। प्रधानों का चयन एवं प्रशिक्षण विशेष प्रकार से होगा। शाला संगमों का विकास एक लचीले रूप में किया जायेगा। इनमें संस्थाओं एवं अन्य संगत व्यवस्थाओं का समावेश होगा। शिक्षकों में वृत्यात्मकता को प्रोत्साहित करना, आचार के नियमों की पालना को सुनिश्चित करना तथा अनुभव एवं सुविधाओं में साझेदारी करना किसी भी संगम का लक्ष्य होगा। ऐसी आशा की जाती है कि विद्यालय संगमों का विकसित स्वरूप आगे चल कर निरीक्षण का अधिकांश कार्य अपने हाथ में ले लेगा।

10.8. स्थानीय समुदायों को अपनी समुचित संस्थाओं के माध्यम से विद्यालय सुधार कार्यक्रमों में महती भूमिका दी जायेगी।

स्वैच्छिक संगठन एवं अनुदान प्राप्त संस्थाएं

10.9. सामाजिक रूप से सक्रिय समूहों तथा गैर सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठनों के प्रयासों को भी प्रोत्साहन दिया जायेगा। यह इस बात पर निर्भर करता हैं कि उनकी व्यवस्था ठीक हो तथा उन्हें वित्तीय सहायता प्राप्त हो। साथ ही शिक्षा का व्यवसायीकरण करने वाली संस्थाओं की स्थापना पर रोक लगाने के प्रयास किये जायेंगे।

भाग 11

संसाधन एवं संवीक्षा

11.1. सन् 1964-66 के शिक्षा आयोग, सन् 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा शिक्षा से रचनात्मक रूप से जुड़े हुए सभी लोगों ने इस बात पर जोर दिया है कि शिक्षा की प्रकृति एवं विस्तार के अनुरूप ही उस पर पूंजी निवेश किया जाना चाहिए। भारतीय समाज के विकास-आधारित समानता के लक्ष्यों की पूर्ति तभी संभव हो सकती है।

11.2. जहाँ तक संभव हो, निम्न साधनों से संसाधन प्राप्त किये जायेंगे :—

(i) दान की व्यवस्था से (ii) शिक्षा से लाभान्वित होने वाले समुदाय से आग्रह करके कि वे विद्यालय भवनों के निर्माण एवं अस्थायी प्रकृति के सामान की व्यवस्था में सहयोग दें (iii) शिक्षा के उच्च स्तरों पर शिक्षण शुल्क में वृद्धि करके तथा (iv) सुविधाओं के कुशल उपयोग के माध्यम से बचत की व्यवस्था करके।

जो संस्थाएं तकनीकी एवं वैज्ञानिक मानव-शक्ति का सृजन तथा शोध करती हैं वे सरकारी, गैर सरकारी संस्थाओं एवं विभागों, उपभोक्ता समूहों तथा व्यवसाय प्रबन्धकों से एक प्रकार का शुल्क/कराधान वसूल कर सकेंगी। ये सब प्रयास राज्य के संसाधनों के अधिकार को तो कम करेंगे ही; शैक्षिक प्रणाली के भीतर उत्तरदायित्व की पहली भावना का भी सृजन करेंगे। ये सब कुछ सही हैं पर कुल मिला कर ये प्रयास केवल सीमान्तक स्तर तक ही खर्च की पूर्ति कर पायेंगे। सरकार एवं पूरा समुदाय मिल कर निम्न बिन्दुओं के लिए संसाधनों की व्यवस्था करेंगे :

(i) सार्वजनीक प्राथमिक शिक्षा (ii) निरक्षरता का उन्मूलन (iii) पूरे देश में सभी वर्गों के लिए शिक्षा की व्यवस्था एवं समावता का निर्वाह, (iv) शैक्षिक कार्यक्रमों की सामाजिक प्रासंगिकता, गुणवत्ता एवं ज्ञान में वृद्धि, (v) आत्मनिर्भर आर्थिक विकास के लिए आवश्यक ज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का वैज्ञानिक क्षेत्र में विकास तथा (vi) राष्ट्रीय जीवनधारा की रक्षा हेतु मूल्यों की महत्त्वपूर्ण चेतना।

11.3. शिक्षा पर निवेश न हो या अधूरा हो तो उसके परिणाम अत्यन्त गंभीर होंगे। इसी प्रकार व्यावसायिक अथवा तकनीकी शिक्षा अथवा शोध की उपेक्षा का विचार तक भी अमान्य होगा। इन क्षेत्रों में अगर न्यून/घटिया उपलब्धियाँ हुईं तो पूरे राष्ट्रीय अर्थ चक्र के लिए वे अपूरणीय क्षति के रूप में सामने आयेंगी। स्वतंत्रता के बाद विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास के लिए संस्थाओं का जो जाल बिछाया गया था, वह तेजी से पुराना पडता जा रहा है। इसे आधारभूत ढंग एवं पूरे वेग के साथ अद्यतन बनाना है। आज के कदम आज की स्थितियों में संगत होने चाहिए।

11.4. इन सब अनिवार्यताओं की दृष्टि से शिक्षा को राष्ट्रीय विकास एवं जीवन की अक्षुण्णता के लिए एक महत्वपूर्ण निवेश क्षेत्र माना जायेगा। सन् 1968 की शिक्षा नीति का मंतव्य था कि शिक्षा पर खर्च धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए ताकि यथाशीघ्र वह कुल राष्ट्रीय आय के 6 प्रतिशत के स्तर तक पहुँच जाए।

लेकिन जब ऐसा नहीं हो सका और निवेश निर्धारित लक्ष्य से काफी कम रहा तो हमारा दायित्व हो जाता है कि दृढ़ निश्चय के साथ में कार्य करें तथा शिक्षा नीति में दिये गये कार्यक्रमों के लिए धन की व्यवस्था करें। वास्तविक जरूरतें तो समय-समय पर संगणनाओं एवं समीक्षाओं के आधार पर जाती रहेगी। पर शिक्षा का खर्च-प्रास्ताव इसी हिसाब से बनाया जाएगा कि नीति को क्रियान्वित करने के लिए सातवीं योजना में वस्तुतः आवश्यकता कितनी मात्रा में है। आगे इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि आठवीं योजना से आगे यह खर्च राष्ट्रीय आय के 6% तक समान रूप से बढ़े।

समीक्षा

11.5. नयी शिक्षा नीति के कियान्वयन के विविध मानदण्डों की हर पाँचवें वर्ष समीक्षा की जानी चाहिए। समय के थोड़े-थोड़े अन्तराल से भी संवीक्षाएँ होती रहेंगी ताकि क्रियान्विति की प्रगति तथा धाराओं का लेखाजोखा किया जा सके।

भाग 12

भविष्य

12.1. भारत में शिक्षा का भावी स्वरूप इतना जटिल है कि उसे पूर्ण सूक्ष्मता एवं सटीक ढंग से देखा जाना कठिन हो जाता हैं। फिर भी हम अपने लक्ष्यों में निश्चित रूप से सफल होंगे क्योंकि हमारी परपराएं हमेशा से ही मानसिक एवं आत्मिक उपलब्धियों को उच्च स्थान देती आई हैं।

12.2. मुख्य कार्य है शिक्षा के ऊर्ध्व ढाँचे के धरातल को मजबूत करना। शताब्दी के मोड़ पर इस ढाँचे में लगभग 100 करोड़ व्यक्ति सम्मिलित हो सकते हैं। यह भी जरूरी है कि इस ऊर्ध्व ढाँचे के शीर्ष पर रहनेवाले लोग विश्व के सर्वोत्तम लोगों में से हों। अतीत में भी हमारी सांस्कृतिक धाराओं ने दोनों ही उद्देश्यों पर ध्यान दिया था। हाँ, बीच में वैदेशिक आधिपत्य के कारण जरूर थोड़ा-सा शिथिलन आया था। अब यह संभव होना चाहिए कि शिक्षा अपनी बहु-आयामी भूमिकाओं का निर्वाह करते हुए मानव संसाधन विकास के राष्ट्रव्यापी प्रयासों को गति एवं विस्तार दे सके। □

NIEPA DC
D03420